महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५९ अंक : ०१

दयानन्दाब्द: १९२

विक्रम संवत्: पौष शुक्ल २०७३

कलि संवत्: ५११७

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११७

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक–परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर– ३०५००१

दूरभाष: ०१४५–२४६०१६४

मुद्रक–श्री मोहनलाल तँवर वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

दूरभाष : ०१४५–२४६०८३१

–परोपकारी का शुल्क–

भारत में

वार्षिक–२०० रु., **द्विवार्षिक**–३९० रु., **त्रिवार्षिक**–५८० रु.,

आजीवन–(=१५ वर्ष)–२००० रु.।

एक प्रति का मूल्य – रु. १५/–

विदेश में

वार्षिक–५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डालर

द्विवार्षिक–९५ पा./१५२ डा.,

त्रिवार्षिक–१४० पा./२२५ डा.,

आजीवन–(=१५वर्ष)–५००पा./८०० डा.

एक प्रति का मूल्य – पाउण्ड–३

एक प्रति का मूल्य – डालर – ४

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५–२४६०१२०

ऋषि उद्यान : ०१४५–२६२११२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जनवरी प्रथम २०१७

अनुक्रम

०१. ऋषि दयानन्द की दृष्टि में मुक्ति	सम्पादकीय	०४
०२. कुछ तड़प–कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	०७
०३. स्वामी श्रद्धानन्द : जिन्होंने....	डॉ. सुरेन्द्र कुमार	१२
०४. परोपकारी क्या है?	सतीश शुक्ल	१५
०५. शाश्वत–स्वर	आचार्य धर्मवीर	१७
०६. सत्यार्थप्रकाश प्रचार–प्रसार की भव्य योजना		१९
०७. ईश्वर–परिचय	प्रकाश चौधरी	२०
०८. पितृ–यज्ञ	गंगाप्रसाद उपाध्याय	२३
०९. जिज्ञासा समाधान–१२४	आचार्य सोमदेव	२८
१०. ऋषि – मेला	प्रभाकर आर्य	३२
११. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		३४
१२. वामनावतार की कल्पना	शिवपूजन सिंह	३५
१३. संस्था–समाचार		३९
१४. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

– उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ –
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

ऋषि दयानन्द की दृष्टि में मुक्ति

प्रस्तुत सम्पादकीय प्रो. धर्मवीर जी के द्वारा उनके निधन से पूर्व लिखा था। इसे यथावत् प्रकाशित किया जा रहा है।

-सम्पादक

मुक्ति एक सापेक्ष शब्द है। मुक्ति, जिसका अर्थ है- छूटना। छूटना बन्धन के बिना सम्भव नहीं। जो बन्धन में है, वही छूटना चाहता है, छूटता है। बन्धन और मुक्ति दोनों शब्द अनुभव से सम्बन्ध रखते हैं। इसलिए मुक्ति की चर्चा चेतन से ही सम्बद्ध हो सकती है, अचेतन से नहीं। संसार में दु:ख और बन्धन अनुभव करने वाले को जीव कहते हैं। दु:ख का अनुभव जीवात्मा शरीर से ही कर सकता है। शरीर का प्रारम्भ जन्म से होता है, इसलिए शास्त्र में जन्म को ही दु:ख का कारण माना गया है-

दु:खजन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरापाये
तदनन्तरापायादपवर्ग:।। - सांख्य

शरीर का जन्म न होना अर्थात् आत्मा का बन्धन से मुक्त होना।

शरीर के बिना आनन्द का अनुभव कैसे हो सकता है? इस विषय में ऋषि दयानन्द शास्त्र के विचार से सहमत हैं कि जीवात्मा अपने स्वाभाविक गुण और सामर्थ्य से मुक्ति के आनन्द का उपभोग करता है।

''**शृण्वन् श्रोत्रम्.......।** -छा. ८/१२/४-५

मुक्ति में जीव के साथ अन्त:करण, आनन्द, प्राण, इन्द्रियों का शुद्ध भाव बना रहता है।'' -सत्यार्थप्रकाश नवम समुल्लास

ऋषि दयानन्द सूक्ष्म-शरीर के दो भेद स्वीकार करते हैं। एक सूक्ष्म-शरीर भौतिक है, जिससे जीव संसार के अन्दर जन्म-जन्मान्तर की यात्रा करता है। दूसरा सूक्ष्म-शरीर अभौतिक है, जो मुक्ति में आनन्द का अनुभव कराता है-

''दूसरा- पाँच प्राण, पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच सूक्ष्मभूत और मन तथा बुद्धि, इन सतरह तत्त्वों का समुदाय सूक्ष्म-शरीर कहाता है। यह सूक्ष्म शरीर जन्म-मरणादि में भी जीव के साथ रहता है। इसके दो भेद हैं- एक भौतिक अर्थात् जो सूक्ष्म-भूतों के अंश से बना है। दूसरा स्वाभाविक, जो जीव के स्वाभाविक गुण रूप हैं। यह दूसरा अभौतिक शरीर मुक्ति में भी रहता है। इसी से जीव मुक्ति में सुख को भोगता है।'' - सत्यार्थप्रकाश नवम समुल्लास

एक तीसरी समस्या है- मुक्ति से लौटना। सामान्य जो लोग जीव को परमेश्वर का अंश मानते हैं, वे जीव का मुक्ति में परमेश्वर में ही लय हो जाना स्वीकार करते हैं। जो लोग जीव को परमेश्वर से भिन्न स्वीकार करते हैं, वे भी जीव का मुक्ति से लौटना स्वीकार नहीं करते। ''मुक्ति में ईश्वर के साथ- **सालोक्य**- ईश्वर के लोक में निवास, **सानुज्य**- छोटे भाई के सदृश ईश्वर के साथ रहना, **सारूप्य**- जैसे उपासनीय देव की आकृति है, वैसा बन जाना, **सामीप्य**- सेवक के समान ईश्वर के समीप रहना, **सायुज्य**- ईश्वर के साथ संयुक्त हो जाना- ये चार प्रकार की मुक्ति मानते हैं।''

ऋषि दयानन्द कहते हैं कि ये मुक्ति तो कीट-पतंग, गधे-घोड़े आदि सबको प्राप्त है-

''ये जितने लोक हैं, वे सब ईश्वर के हैं, इन्हीं में सब जीव रहते हैं, इसलिए **सालोक्य** मुक्ति अनायास प्राप्त है। **सामीप्य**- ईश्वर सर्वत्र व्याप्त होने से सब उसके समीप है, इसलिए **सामीप्य** मुक्ति स्वत: सिद्ध है। जीव ईश्वर से सब प्रकार छोटा और चेतन होने से स्वत: बन्धुवत् है। इससे **सानुज्य** मुक्ति भी बिना प्रयत्न के सिद्ध है और सब जीव सर्वव्यापक परमात्मा में व्याप्य होने से संयुक्त हैं। इससे **सायुज्य** मुक्ति भी स्वत: सिद्ध है और जो अन्य साधारण नास्तिक लोग करने से तत्त्वों में तत्व मिलकर मुक्ति मानते हैं, वह तो कुत्ते, गधे आदि को भी प्राप्त है।''

- सत्यार्थप्रकाश २९०

''**बन्ध**- सनिमित्तक अर्थात्- अविद्यादि निमित्त से है। जो-जो पापकर्म ईश्वरभिन्नोपासना, अज्ञानादि, ये सब दु:ख फल करने वाले हैं। इसीलिए यह बन्ध है कि जिसकी इच्छा नहीं और भोगना पड़ता है।

मुक्ति- अर्थात् सब दु:खों से छूटकर बन्धरहित सर्वव्यापक ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना,

नियत समय पर्यन्त मुक्ति के आनन्द को भोग के पुनः संसार में आना।''

– स्वमन्तव्या.

''**मुक्ति**- अर्थात् जिससे सब बुरे कामों और जन्ममरणादि दुःखसागर से छूटकर सुखस्वरूप परमेश्वर को प्राप्त होके सुख ही में रहना मुक्ति कहाती है।''

– आर्य्योद्देश्यरत्नमाला

जो लोग ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते हैं, उन्हें मुक्ति को भी स्वीकार करना पड़ता है। ईश्वर और मुक्ति का सम्बन्ध कैसा है, इसी में सिद्धान्त का भेद हो जाता है।

प्रथम, जो जीवात्मा को ईश्वर का अंश मानते हैं, उनकी दृष्टि में ईश्वर में जीव का लय हो जाना मुक्ति है। इस मत में ईश्वर से जीवात्मा का होना और जीवात्मा का ईश्वर में लय हो जाना, इसकी तार्किकता शास्त्रों में बहुत है, परन्तु उसकी स्वीकार्यता कठिन है। ब्रह्म में माया, अविद्या या अज्ञान की उपस्थिति जीवात्मा के बनने का कारण है, किन्तु कितने ब्रह्म का भाग जीवात्मा बन जाता है, जीवात्मा अपने अन्दर व्याप्त माया का अनुभव करके उससे मुक्त होकर पुनः ब्रह्मरूप हो जाता है, यह मुक्ति है, परन्तु यह मुक्ति कितने समय के लिये है, यह निश्चित नहीं कहा जा सकता, क्योंकि माया का पुनः ब्रह्म से मेल कब और कहाँ होगा, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

जो लोग ब्रह्म से भिन्न जीवात्मा की सत्ता स्वीकार करते हैं, उनमें भी दो सिद्धान्त प्रचलित हैं। प्रथम वे लोग जो मुक्ति के बाद जीव का भी ब्रह्म में ही लय स्वीकार करते हैं। ऋषि दयानन्द उनमें से हैं, जो जीवात्मा की मुक्ति तो मानते हैं, परन्तु उसमें लय न मानकर ब्रह्म के साथ-साथ पृथक् सत्ता के साथ विचरना स्वीकार करते हैं। इस परिस्थिति में दो समस्याएँ, विचारक के सम्मुख आती हैं- एक जीवात्मा मुक्त दशा में शरीर के बिना रहता हुआ मुक्ति या ब्रह्मानन्द के सुख का अनुभव कैसे करता है? तथा दूसरी समस्या है- यदि जीवात्मा पृथक् सत्ता है तो उसकी मुक्ति की दशा कब तक रहती है एवं उसका आधार क्या है?

ऋषि दयानन्द मुक्ति से लौटने के जो तार्किक आधार देते हैं, वे निम्न हैं-

१. यदि मुक्ति में गये जीव लौटकर न आयें तो संसार का उच्छेद हो जाये, क्योंकि कभी न कभी तो संसार के जीव समाप्त हो जायेंगे। कितना भी बड़ा कोष क्यों न हो, जिसमें आगम न हो और निर्गम सतत् बना रहे तो वह कोष अवश्य समाप्त हो जायेगा।

२. मुक्ति के सुख का महत्त्व तभी है, जब संसार के दुःख का अनुभव हो। दुःख के बिना मुक्ति के सुख का कोई मूल्य नहीं। धर्म-अधर्म, हानि-लाभ, निन्दा-स्तुति, सत्य-असत्य में एक के बिना दूसरे का कोई अर्थ नहीं होता, वैसे ही दुःख के बिना सुख का कोई महत्त्व नहीं होता। इस प्रकार दुःख-सुख के बारी-बारी से अनुभव में ही सुख का उत्कर्ष और मुक्ति का महत्त्व है।

३. सान्त कर्मों का फल अनन्त नहीं हो सकता। मनुष्य कितने भी कर्म करे, सभी की सीमा है। ऐसे सीमित कर्मों का फल अधिक तो हो सकता है, परन्तु असीम या अनन्त नहीं हो सकता।

४. केवल मुक्ति में पहुँचकर न लौट पाना, यह भी एक प्रकार का बन्ध ही है। जहाँ एकरसता या एक ही प्रकार का जीवन है, वहाँ नीरसता का अनुभव होगा। इस प्रकार मुक्ति का प्रयोजन ही समाप्त हो जाता है।

मुक्ति से लौटने में वेद का प्रमाण-

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम।
को नो मह्या अदितये पुनर्दात्पितरं च दृशेयं मातरं च।।
अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम।
स नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च।।

-ऋ. १/२४/१-२

प्रश्न- हम लोग किसका पवित्र नाम जानें? कौन नाश रहित पदार्थों के मध्य में वर्तमान देव सदा प्रकाशस्वरूप है, हमको मुक्ति का सुख भुगाकर पुनः इस संसार में जन्म देता और माता तथा पिता का दर्शन कराता है।।१।।

उत्तर- हम इस प्रकाशस्वरूप, अनादि, सदा मुक्त परमात्मा का नाम पवित्र जानें, जो हमको मुक्ति में आनन्द भुगाकर पृथिवी में पुनः माता-पिता के सम्बन्ध में जन्म देकर माता-पिता का दर्शन कराता है। वही परमात्मा इस प्रकार मुक्ति की व्यवस्था करता और सबका स्वामी है।

इस लौटने की अवधि क्या होगी? इस समस्या का

समाधान ऋषि दयानन्द उपनिषद् के एक वाक्य 'परान्त काल' से करते हैं-

प्रश्न- जो मुक्ति से भी जीव फिर आता है तो वह कितने समय तक मुक्ति में रहता है?

उत्तर - ते ब्रह्मलोके ह परान्तकाले, परामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे। - मुण्डक ३/२/६

वे मुक्त जीव मुक्ति में प्राप्त होके ब्रह्म में आनन्द को तब तक भोग के पुन: महाकल्प के पश्चात् मुक्ति-सुख को छोड़ के संसार में आते हैं। इसकी संख्या यह है कि- तेंतालीस लाख, बीस सहस्र वर्षों की एक 'चतुर्युगी', दो सहस्र चतुर्युगियों का एक 'अहोरात्र', ऐसे तीस अहोरात्रों का एक 'महीना', ऐसे बारह महीनों का 'एक वर्ष', ऐसे शत वर्षों का 'परान्त काल' होता है। इसको गणित की रीति से यथावत् समझ लीजिये। इतना समय मुक्ति में सुख भोगने का है। -सत्यार्थ प्रकाश, नवम समु.

ऋषि दयानन्द जीव के मुक्ति में रहने के वेद से प्रमाण देते हुए लिखते हैं-

ये यज्ञेन दक्षिणया समक्ता इन्द्रस्य सख्यममृतत्वमानश।
तेभ्यो भद्रमङ्गिरसो वो अस्तु प्रति गृम्णीत मानवं सुमेधस:।। -ऋ. ८/२/१/१

(ये यज्ञेन) अर्थात् पूर्वोक्त ज्ञान, रूप, यज्ञ और आत्मादि द्रव्यों की परमेश्वर को दक्षिणा देने से वे मुक्त लोग मोक्ष सुख में प्रसन्न रहते हैं। (इन्द्रस्य) जो परमेश्वर के सख्य अर्थात् मित्रता से मोक्ष भाव को प्राप्त हो गये हैं, उन्हीं के लिये भद्र नाम सब सुख नियत किये गये हैं (अङ्गिरस:) अर्थात् उनके जो प्राण हैं वे (सुमेधस:) उनकी बुद्धि को अत्यन्त बढ़ाने वाले होते हैं और उस मोक्ष प्राप्त मनुष्य को पूर्व मुक्त लोग अपने समीप आनन्द में रख लेते हैं और फिर वे परस्पर अपने ज्ञान से एक दूसरे को प्रीतिपूर्वक देखते और मिलते हैं।

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।।

- यजु. ३२/१०

(स नो बन्धु:) सब मनुष्यों को यह जानना चाहिए कि वही परमेश्वर हमारा बन्धु अर्थात् दु:ख का नाश करने वाला, (जनिता) सब सुखों को उत्पन्न और पालन करने वाला है तथा वही सब कामों को पूर्ण करता और सब लोकों को जानने वाला है कि देव अर्थात् विद्वान् लोग मोक्ष को प्राप्त होके सदा आनन्द में रहते हैं और वे तीसरे धाम अर्थात् शुद्ध सत्व से सहित हो के सर्वोत्तम सुख में सदा स्वच्छन्दता से रमण करते हैं।

- धर्मवीर

न्याय दर्शन का अध्यापन

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा के द्वारा संचालित 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर में वर्षों से संस्कृत व्याकरण और दर्शनों का अध्यापन कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। इसी क्रम में '**महर्षि गौतम**' द्वारा प्रणीत '**न्याय दर्शन**' का **आचार्य श्री सत्यजित् जी** द्वारा १ मार्च २०१७ से विधिवत् नियमित रूप से अध्यापन कराया जावेगा। यह दर्शन ९-१० महीनों में सम्पूर्ण हो जावेगा।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षाएँ भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों, वानप्रस्थियों, संन्यासियों व अन्य असमर्थों हेतु निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क है। समर्थ प्रतिभागी इच्छानुसार यथायोग्य सहयोग कर सकते हैं। माताओं व बहनों की निवास व्यवस्था पृथक् रहेगी। पढ़ने के इच्छुक आर्यजन कृपया, सम्पर्क कर पूर्व स्वीकृति ले लेवें।

सम्पर्क सूत्र - आचार्य सत्यजित् जी - ०९४१४००६९६१, समय रात्रि (८.४५ से ९.१५)

पता - ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर - ३०५००१ (राज.) **ई-मेल** - styajita@yahoo.com

कुछ तड़प-कुछ झड़प

– राजेन्द्र जिज्ञासु

ऋषि-जीवन विचार:- एक प्रेमी पाठक ने किसी अन्य सज्जन के प्रश्न अथवा आक्षेप के समाधान के लिये आग्रह किया है। प्रश्नकर्त्ता की यह शंका अथवा आपत्ति है कि इस लेखक द्वारा लिखित और परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ऋषि जीवन-'नवयुग की आहट' में अमृतसर में ऋषि के आगमन की एक तिथि ठीक नहीं है। अच्छा होता यदि प्रश्नकर्त्ता महानुभाव 'महर्षि के सम्पूर्ण जीवन-चरित्र' से इसके मिलान करके आप ही यह जान लेता कि नवयुग की आहट में मुद्रण दोष से ऐसा हुआ है। हरबिलास जी के ग्रन्थ से भी सहायता ली जा सकती थी।

उन्होंने पुस्तक को ध्यान से पढ़ा। इसके लिये धन्यवाद। अच्छा होता यदि वह इस पुस्तक की मौलिकता व प्रामाणिकता पर भी कुछ टिप्पणी करते तो जनता को लाभ होता। अमृतसर में ऋषि के आगमन पर हमने अलभ्य दस्तावेजों के आधार पर नया प्रकाश डाला है। सन् १८८३-१८८४ की आर्यसमाज अमृतसर की वार्षिक रिपोर्ट कहीं भी नहीं है। हमने इसे भी खोजकर धर्मप्रेमियों को लाभ पहुँचाया है। अमरीका में किसी भारतीय विचारक महापुरुष पर सबसे पहला जो लेख छपा, वह महर्षि दयानन्द जी पर था। हमने इस पुस्तक में पाठकों को उससे भी लाभ पहुँचाया है और भी नई-नई खोज नये-नये प्रमाण दिये हैं। पुस्तक की इन विशेषताओं का उल्लेख भी किया होता तो-

स्वामी दर्शनानन्द जी का संन्यास:- स्वामी दर्शनानन्द जी के विषय में भी उन्हीं सज्जन ने कुछ प्रश्न पूछे हैं। हमारा निवेदन है कि स्वामी दर्शनानन्द जी पर अपने द्वारा लिखित खोजपूर्ण जीवन में हमने उनके संन्यास पर सघन खोज करके प्रकाश डाला है। उनको अमृतसर में ऋषि-दर्शन का सौभाग्य मिला था। वहाँ वह ऋषि से टकराने आये थे, परन्तु व्याख्यान सुनकर स्वयं ही बदल गये। उस समय वह वेदान्ती साधु थे। कब संन्यास लिया? किससे लिया? इसके बारे में उनके एक ट्रैक्ट से, उनके शिष्यों से जो जानकारी मिली, वह पुस्तक में दे दी गई है।

हमारी खोज की विशेषता या देन यह है कि आर्यसमाजी बन गये तो घर से भाग कृपाराम को साधुवेश में उनके चाचा ने दीनानगर के बाजार में एक पादरी को शास्त्रार्थ में ललकारते हुये पकड़ लिया और जैसे तैसे मनाकर उन्हें घर ले गये। इतनी जानकारी तो आर्यसमाजी लेखकों ने दी है, परन्तु कोई नहीं जानता था कि उनके चाचाजी को कृपाराम के दीनानगर में होने का पता कैसे चला। **इस पर प्रामाणिक प्रकाश पहली बार इसी लेखक ने डाला है।**

कृपाराम साधुवेश में कादियाँ पहुँचे। वहाँ आर्यसमाज के युवा मन्त्री ला. मलावामल को अनुरोध किया कि मेरे व्याख्यान करवाओ। मलावामल जी ने उनकी कच्ची आयु देखकर उनका प्रचार करवाने से इनकार कर दिया। उनके परिवार की कुछ जानकारी उनसे ले ली और कुछ-कुछ जानते भी थे। कृपाराम (तब नित्यानन्द) वहाँ से दीनानगर चले गये। दीनानगर में भी तब समाज था। इधर मलावामल जी से सूचना पाकर कृपाराम जी के चाचा दीनानगर पहुँच गये और उन्हें भरे बाजार में जा पकड़ा। यह एक रोचक प्रेरक कहानी है।

उनके कादियाँ जाने का प्रमाण क्या?:- हमारे इस कथन का प्रमाण क्या है? कादियाँ में ऋषि-जीवन में ही समाज बन गया था, परन्तु शिथिल होकर टूट गया। फिर पं. लेखराम जी ने १८८५ में दोबारा बना दिया। यह घटना पं. लेखराम जी की कादियाँ यात्रा से पहले की है। लाला मलावामल की चर्चा कई ग्रन्थों में है। मैंने उनके जी भरकर दर्शन किये। वह बहुत वृद्ध हो चुके थे। अपने पुत्र श्री दाताराम हकीम की दुकान पर दायें ओर चुपचाप बैठे रहते थे। मैं कॉलेज में पढ़ता था। आर्य सभासदों के चन्दे इकट्ठे करके कोषाध्यक्ष जी को सौंप दिया करता था। लाला दाताराम जी भी जाने पर अपना चन्दा चार आने मासिक दे दिया करते थे।

जब मैं उनकी दुकान पर जाता तो ला. मलावामल के पास बैठकर उनसे बातें सुनता। वह अपने संस्मरण सुनाकर

सेवक को तृप्त कर देते। उनके मुख से यह घटना सुनकर मेहता जैमिनि जी तथा श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज की कोटि के इतिहासकारों के समय से व्याख्यानों में सुनाता आ रहा हूँ। वह कादियाँ ऋषि के बलिदान के पश्चात् और पं. लेखराम जी की कादियाँ यात्रा (सन् १८८५) से पहले कादियाँ आये थे। अनुमान से यही कहा जा सकता है कि सन् १८८४ में स्वामी दर्शनानन्द जी कादियाँ पधारे थे। अनुभवहीन युवक होने से मैं तब लाला मलावामल से सन् न पूछ सका। इतनी सूझ ही कहाँ थी।

'आर्यवीरों के दर्शन' पुस्तक के लेखक (जो दर्शनानन्द काल के थे) यदि उनके दीनानगर आगमन का सन् लिख देते तो यह गुत्थी भी स्वयमेव सुलझ जाती। आशा है इतने स्पष्टीकरण से प्रश्नकर्त्ता की सन्तुष्टि हो जायेगी।

श्री अमिताभ बच्चन बधाई के पात्रः- श्री अमिताभ बच्चन अपनी कला के कारण अखिल विश्व में यश पा रहे हैं। कभी सिनेमा देखा ही नहीं, अतः उनकी कलाकार के रूप में उपलब्धियों के बारे में तो कुछ कह नहीं सकता, परन्तु उनकी शालीनता, शिष्ट भाषा व विनम्रता की प्रशंसा सदा से करता रहा हूँ। इन्हीं दिनों पश्चिम का अन्धानुकरण करने वाले हीन भावना के देशवासियों को आपने जो सीख दी है, उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा सब देशभक्त स्वाभिमानी भारतीयों को करनी ही चाहिये। जन्मदिन पर केक काटने की कुप्रथा तो थी ही, अब उसे मुँह पर लेपना-पोतना तथा मोमबत्ती जलाकर बुझाना-ये सब निरर्थक कर्मकाण्ड हैं। हमारी परम्परा व मान्यता प्रत्येक शुभ-अवसर पर यज्ञ-हवन करने, दीपक प्रज्वलित करने व आशीर्वाद प्राप्त करने की है। श्री अमिताभ बच्चन को इस शुभ परम्परा की सीख अपने प्रशंसकों को देनी चाहिये।

करवाचौथः- 'सुहागिनों का त्यौहार' कह-कहकर टी.वी. तथा पत्र-पत्रिकाओं ने करवाचौथ के उपवास को अनावश्यक रूप से महिमा मण्डित कर रखा है। यह कोई त्यौहार नहीं है। यह तो स्पष्ट रूप से एक अन्धविश्वास है। दूरदर्शन वाले तथा पठित लोग, जो स्वयं को बुद्धिजीवी कहते नहीं थकते, वे 'पुरुष-प्रधान समाज' इन तीन शब्दों की बहुत रट लगाते रहते हैं। ऐसे सब लोग तथा श्रीमती सुषमा स्वराज-जो करवाचौथ को सुहागिनों का त्यौहार बताती हैं, क्या श्री अमिताभ बच्चन की मार्मिक सीख पर ध्यान देकर अपनी सोच बदलेंगी?

श्री अमिताभ बच्चन के साहस व स्पष्टवादिता पर हम उन्हें बधाई देते हैं। दिनभर महिलाओं को भूखा मारना-क्या यह 'पुरुष-प्रधान समाज' द्वारा स्त्रियों को यातना देने व ठगने जैसा कर्म नहीं है? इससे बड़ा अन्धविश्वास और क्या होगा कि पत्नी के उपवास से पति की आयु बढ़ जाती है? क्या वेद, शास्त्र, स्मृतियों में इस कुरीति का कहीं विधान है? इतिहास में इसकी कतई चर्चा नहीं मिलती।

बुद्धि को यह अन्धविश्वास स्वीकार्य ही नहीं। वेद, शास्त्र तथा गीता का कर्म-सिद्धान्त इस रुढ़ि को रौंदता है कि पत्नी के उपावास से पति दीर्घजीवी हो सकता है। पत्नी के दीर्घजीवन का कोई कर्मकाण्ड पोंगापंथियों को खोजना चाहिये। करोड़ों विधवाओं की चीत्कार सुनकर किसी तथाकथित धर्माचार्य ने पतियों को आज पर्यन्त पत्नियों के दीर्घजीवन के लिये कोई करवाचौथ आविष्कृत करके नहीं दिया।

लगता है कि श्री अमिताभ बच्चन के परिवार के पुराने आर्यसमाजी संस्कार जाग उठे हैं। आओ! जन-जन को सुनायें और समझायें कि पत्नी के सन्ध्या करने का फल पत्नी को ही मिलेगा न कि पति को। पत्नी को औषधि देने से रोगी पति रोगमुक्त नहीं हो सकता। प्रत्येक रुढ़ि को, प्रत्येक कुरीति को सनातन-धर्म या भारतीय संस्कृति मान लेना मूर्खता है, पाप कर्म है। जैसे बन्दरिया अपने मृत बच्चे को छाती से चिपकाए फिरती है, इसी प्रकार निरर्थक और शास्त्र-विरुद्ध कुरीतियों के प्रचार को हिन्दुत्व मानना हास्यास्पद है।

चामधेड़ा का ऐतिहासिक उत्सवः- महर्षि दयानन्द जी ने लगभग दो सप्ताह तक हरियाणा के रेवाड़ी नगर में अमृत वर्षा की थी। हरियाणा के एक ही नगर को ऋषि सन्देश सुनने का सौभाग्य प्राप्त रहा है। राव युधिष्ठिर सिंह स्वामी जी महाराज को आमन्त्रित करके इतिहास में अमर हो गये। ऋषि-भक्त राव युधिष्ठिर सिंह वास्तव में हरियाणा के प्रथम समाज-सुधारक थे।

इस क्षेत्र ने आर्यसमाज को श्री स्वामी सर्वानन्द जी महाराज, स्वामी सोमानन्द जी, महाशय हीरालाल आर्य,

कर्मठ-निर्भीक संन्यासी स्वामी सन्तोषानन्द तथा पं. ताराचन्द वैदिक-तोप जैसे नररत्न दिये। विश्व की प्रथम महिला जो सर्वसम्मति से किसी संगठन की प्रधाना चुनी गईं, वह रेवाड़ी समाज की संस्थापक प्रधाना श्रीमती लाडकँवर (राव युधिष्ठिर सिंह जी की पत्नी थीं)। यह आर्यसमाज के लिये एक गौरवपूर्ण घटना है। हरियाणा का यह क्षेत्र इस स्वर्णिम इतिहास पर जितना भी अभिमान करे, थोड़ा है।

पिछले कुछ वर्षों से हमारे एक निष्ठावान् कर्मठ युवक चुपचाप वैदिक-धर्म के प्रचार में सतत साधना कर रहे थे- अनिल आर्य। इस आर्यवीर की परोपकारिणी सभा पीठ थपथपाती रही है। इन पंक्तियों के लेखक के अतिरिक्त सभा के पूर्व प्रधान धर्मवीर जी आर्य, आचार्य कर्मवीर जी, आचार्य सोमदेव जी प्रतिवर्ष समय-समय पर चमधेड़ा की प्रचार-यात्रायें करते रहे हैं। अनिल आर्य को एक से बढ़कर एक पुरुषार्थी-परमार्थी सहयोगी, संगी-साथी आर्यवीर मिलते गये। सभा के एक स्तम्भरूप युवा कार्यकर्त्ता व सहयोगी श्री महेन्द्रसिंह जी आर्य चामधेड़ा ग्राम के ही तो हैं।

आर्यसमाज की स्थापना व प्रथम वार्षिकोत्सवः- २२,२३ अक्टूबर २०१६ को विधिवत् रूप से आर्यसमाज की स्थापना करके वहाँ के स्त्री-पुरुषों ने, आबाल वृद्ध ने सोत्साह अपना प्रथम वार्षिकोत्सव करके आर्यसमाज के अतीत को वर्तमान कर दिखाया है। चामधेड़ा समाज के कर्मठ-युवा अधिकारियों की आर्ययुवक मित्र-मण्डली दूर-दूर से उत्सव में पहुँची। उत्सव क्या एक महासम्मेलन था? धर्मवीर जी ने इसके लिये स्वीकृति दे रखी थी। उनका निधन एक भयङ्कर विघ्न था, तथापि ये उत्सव श्री महेन्द्रसिंह आर्य के मार्गदर्शन में बड़ी शान से सम्पन्न हुआ। युवा अधिकारी वेदी पर दिखाई नहीं देते थे। न ही वे कैमरे के सामने आते थे। व्यवस्था में तथा अतिथियों की सेवा में लगे रहते थे।

उत्सव सफल नहीं-बहुत ही सफल रहा। प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य विरजानन्द जी को एक लाख रु. की राशि देकर सम्मानित किया गया। इसी क्षेत्र की दो स्नातिकायें कार्यक्रम का संचालन करती रहीं। एक स्नातिका को एक दिन एक सम्मेलन की अध्यक्षा बनाया गया। यह इस क्षेत्र में ऐसी पहली घटना थी। इन दोनों स्नातिकाओं सन्ध्या व ऋचा को बहुत प्यार व सत्कार मिला। हरियाणा के ग्रामों में प्रचार करने वाले कई भजनोपदेशक आ गये। सबके भजन हुए। कविवर पं. नरदेव जी के भजनों की रङ्गत ही न्यारी थी।

स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी ने तथा इस विनीत ने विरजा जी के विषय में एक से बढ़कर एक प्रेरणाप्रद संस्मरण सुनाया। बदायूँ से पधारे माननीय विद्वान् संजीव रूप जी के गीत, कवितायें सुनकर ग्रामवासी आनन्दित हुए। आर्यसमाज के सब युवा कार्यकर्त्ताओं में से हम यहाँ अभी किसी की चर्चा नहीं करते। कुछ नाम दें, कुछ का छूट जाए तो ठीक नहीं होगा। फिर कभी सबकी चर्चा की जाएगी। आशा करनी चाहिये कि भविष्य में यह ग्राम आर्यसमाज का ज्योतिकेन्द्र व सुदृढ़ गढ़ बनेगा। लक्षण अच्छे हैं। पदलोलुपता व फोटो का रोग न होने से समाज फूले-फलेगा। आर्यों का प्रेरणाकेन्द्र तो यह बन ही चुका है।

पं. लेखराम जी के साहित्य में ऋषि जीवन की सामग्रीः- ज्ञानपिपासु-जिज्ञासु जनों को यह बताना हमारा कर्त्तव्य बनता है कि पं. लेखराम जी ने ऋषि-जीवन में जो सामग्री दी है, उसका तो सबको कुछ न कुछ पता है। इसके अतिरिक्त भी पण्डित जी के पठनीय, खोजपूर्ण, अद्वितीय ग्रन्थों में ऋषि-जीवन की पर्याप्त सामग्री है, जो **किसी भी बड़े से बड़े ग्रन्थ तथा पण्डित जी के ऋषि-जीवन में भी नहीं मिलती।** जिस किसी को यह भ्रम है कि पण्डित जी ने अपनी सम्मति बदल ली होगी, तभी तो चाँदापुर में शास्त्रार्थ से पूर्व मौलवियों की ऋषि से भेंट की घटना व प्रमाण नहीं दिया गया-ऐसे व्यक्ति की सोच उसे मुबारक। इस विषय में प्रत्येक आर्य को पं. लेखराम जी की खोज व पाण्डित्य विषय पर विश्व-प्रसिद्ध विद्वान् तथा यशस्वी इतिहासकार का लेख अवश्य पढ़ना चाहिये। पढ़ना, लिखना अतिकठिन कार्य है।

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर

दिनांक : १८ से २५ जून, २०१७

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।

१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

email:psabhaa@gmail.com

-संयोजक

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०

बलिदान दिवस २३ दिसम्बर पर विशेष

स्वामी श्रद्धानन्द :
जिन्होंने 'मिस्टर गाँधी' को 'महात्मा गांधी' बनाया

-डॉ. सुरेन्द्र कुमार

जिस समय श्री मोहनदास कर्मचन्द गाँधी दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद, नस्लभेद और उपनिवेशवादी शोषण के विरुद्ध सामाजिक आन्दोलन कर रहे थे, उसी समयावधि में भारत में एक महात्मा अपना सर्वस्व त्यागकर विदेशी शिक्षा, अस्पृश्यता, असमानता, जातिवाद, अशिक्षा, राजनीतिक पराधीनता, अन्धविश्वास, पाखण्ड आदि के विरुद्ध सामाजिक क्रान्ति कर रहे थे। उनका नाम था- महात्मा मुंशीराम (संन्यास नाम-स्वामी श्रद्धानन्द) जो हरिद्वार के निकट कांगड़ी नामक गांव में गंगा तट पर स्वस्थापित 'गुरुकुल कांगड़ी' नामक शिक्षा-संस्था के माध्यम से अपने उद्देश्यों की पूर्ति में संलग्न थे। दक्षिण अफ्रीका में श्री गाँधी का नाम और काम सुर्खियों में था तो भारत में महात्मा मुंशीराम का। दोनों अपने-अपने देश में सामाजिक सुधार में संलग्न थे, किन्तु एक का दूसरे से साक्षात् परिचय नहीं था और न मेल-मिलाप हुआ था। दोनों महापुरुषों का परस्पर साक्षात् परिचय और मेल-मिलाप कराने में सेतु का कार्य किया श्री गाँधी के मित्र प्रो. सी.एफ. एंड्रूज ने। प्रो. एंड्रूज सेंट स्टीफेंस कॉलेज, दिल्ली में शिक्षक थे और दोनों के सुधार-कार्य से प्रभावित थे। उन्होंने श्री गाँधी को लिखे एक पत्र में परामर्श दिया कि 'आप जब भी दक्षिण अफ्रीका से भारत आयें तो भारत के तीन सपूतों से अवश्य मिलें।' वे तीन व्यक्ति थे-महात्मा मुंशीराम, कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर और सेंट स्टीफेंस कॉलेज दिल्ली के प्रिंसिपल श्री सुशील रुद्र (यंग इण्डिया ०६.०१.१९२७)। श्री गाँधी महात्मा मुंशीराम के कार्यों को पढ़कर अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के फीनिक्स आश्रम नेटाल से दिनांक २१ अक्टूबर १९१४ को एक पत्र लिखा, जिसमें महात्मा मुंशीराम जी के कार्यों की प्रशंसा की और उनके प्रति श्रद्धाभाव से आत्मीयता व्यक्त करते हुए उनको 'महात्मा' एवं 'भारत का सपूत' लिखा तथा उनके चरणों में नमन करने हेतु मिलने के लिए अपनी अधीरता व्यक्त की। श्री गाँधी द्वारा अंग्रेजी में लिखे उक्त पत्र की कुछ पंक्तियों का हिन्दी अनुवाद है- "प्रिय महात्मा जी,.......मैं यह पत्र लिखते हुए अपने को गुरुकुल में बैठा हुआ समझता हूँ। निस्सन्देह उन्होंने मुझे इन संस्थाओं (गुरुकुल काँगड़ी, शान्ति निकेतन, सेंट स्टीफेंस कॉलेज) को देखने के लिए अधीर बना दिया है और मैं उनके संचालक भारत के तीनों सपूतों के प्रति अपना आदर व्यक्त करना चाहता हूँ। आपका-मोहनदास गाँधी"। उसके पश्चात् दिनांक ८ फरवरी १९१५ को पूना से हिन्दी भाषा में लिखे एक पत्र में श्री गाँधी ने फिर लिखा- "महात्मा जी.....आपके चरणों में सिर झुकाने की मेरी उमेद है। इसलिए बिना आमन्त्रण आने की भी मेरी फरज समझता हूँ। मैं बोलपुर से पीछे फिरूँ, उस बाबत आपकी सेवा में हाजिर होने की मुराद रखता हूँ। आपका सेवक-मोहनदास गाँधी"।

(दोनों पत्रों की मूल प्रतियाँ गाँधी संग्रहालय, दिल्ली में उपलब्ध हैं।)

कुम्भ पर्व के अवसर पर अपनी पत्नी कस्तूरबा के साथ यात्रा-कार्यक्रम बनाकर श्री गाँधी एक सामान्य कार्यकर्त्ता की तरह ५ अप्रैल १९१५ को हरिद्वार पहुँचे। ६ अप्रैल को उन्होंने गुरुकुल काँगड़ी में पहुँचकर उसके संस्थापक महात्मा मुंशीराम से भेंट कर उनके चरणों में झुककर प्रणाम किया। आठ अप्रैल को गुरुकुल की कनखल स्थित-मायापुर वाटिका में गाँधी जी का सम्मान किया और एक अभिनन्दन पत्र भेंट किया, जिसमें उनको 'महात्मा' की उपाधि से विभूषित किया। वक्ताओं ने भी स्वागत करते हुए कहा कि "आज दो महात्मा हमारे मध्य विराजमान हैं।" महात्मा मुंशीराम ने अपने सम्बोधन में आशा व्यक्त की कि अब महात्मा गाँधी भारत में रहेंगे और "**भारत के लिए ज्योति स्तम्भ बन जायेंगे।**" महात्मा गाँधी ने आभार व्यक्त करते

हुए कहा कि मैं महात्मा मुंशीराम से मिलने के उद्देश्य से ही हरिद्वार आया हूँ। उन्होंने पत्रों में मुझे 'भाई' कहा है, इसका मुझे गर्व है। कृपया आप लोग यही प्रार्थना करें कि मैं उनका भाई बनने के योग्य हो सकूं। अब मैं विदेश नहीं जाऊँगा। मेरे एक भाई (लक्ष्मीदास गाँधी) चल बसे हैं। मैं चाहता हूँ कोई मेरा मार्गदर्शन करे। ''**मुझे आशा है कि महात्मा मुंशीराम जी उनका स्थान ले लेंगे और मुझे 'भाई' मानेंगे।**'' (सम्पूर्ण गाँधी वाङ्‌मय एवं हिन्दू १२.०४.१९१५ अंक)

इस भेंट ने दो समाज-सुधारकों को 'घनिष्ट मित्र' और 'एक-दूसरे का भाई' बना दिया। गुरुकुल काँगड़ी हरिद्वार में इस अवसर पर दोनों महात्माओं के मेल से भारत में सामाजिक सुधार और राजनीतिक स्वाधीनता का एक नया अध्याय आरम्भ हुआ, जिसका सुखद परिणााम भारत की स्वतन्त्रता और शैक्षिक जागरूकता के रूप में सामने आया। गुरुकुल काँगड़ी के उक्त सार्वजनिक अभिनन्दन में श्री गाँधी को 'महात्मा' की उपाधि प्रदान करने के पश्चात् महात्मा मुंशीराम ने अपने पत्रों और लेखों में सर्वत्र उनको 'महात्मा गाँधी' के नाम से सम्बोधित किया। परिणामस्वरूप जन समुदाय में उनके लिए 'महात्मा' प्रयोग प्रचलित हो गया, जो सदा-सर्वदा के लिए गाँधी जी की विश्वविख्यात पहचान बन गया। उससे पूर्व दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेजी सभ्यता के अनुसार उनको 'मिस्टर गाँधी' कहा जाता था। इस प्रकार 'मिस्टर गाँधी' गुरुकुल काँगड़ी आकर 'महात्मा गाँधी' बनकर निकले।

इस भेंट के बाद श्री गाँधी और महात्मा मुंशीराम के सम्बन्धों में निकटता बढ़ती गई। उक्त प्रथम आगमन के अतिरिक्त गाँधी जी फिर तीन बार गुरुकुल काँगड़ी में पधारे। दूसरी बार १८-२० मार्च १९१६ को आये और गुरुकुल के अछूतोद्धार सम्मेलन तथा वार्षिक उत्सव में भाषण किया था। तीसरी बार १८-२० मार्च १९२७ को गुरुकुल के दीक्षान्त समारोह में उपस्थित होकर वक्तव्य दिया। चौथी बार २१ जून १९४७ को गुरुकुल में पधारकर गुरुकुलवासियों को आशीर्वाद देकर गये। गुरुकुल काँगड़ी में चार बार आने का महात्मा गाँधी का यह एक रिकॉर्ड है, क्योंकि इतनी बार वे भारत की किसी अन्य शिक्षा-संस्था में नहीं गये। उनका मानना था कि ''गुरुकुल काँगड़ी तो गुरुकुलों का पिता है। मैं वहाँ कई बार गया हूँ। स्वामी जी के साथ मेरा सम्बन्ध बहुत पुराना है।''(महादेव भाई की डायरी,खण्ड ७)

ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी के अभाव में या अन्य कारणों से कुछ लेखकों ने यह धारणा फैला दी है कि 'श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर ने प्रथम बार श्री गाँधी को पहले से ही 'महात्मा' कहकर पुकारा था।' यह विचार बाद में प्रचलित किया गया है, जो अनुमान पर आधारित कल्पना मात्र है। इसका कोई लिखित ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है। इस सम्बन्ध में कुछ तथ्यों पर चिन्तन किया जाना आवश्यक है-

१. 'महात्मा' शब्द का प्रयोग श्री गाँधी और महात्मा मुंशीराम के पारस्परिक लेखन और व्यवहार में प्रचलित था, श्री टैगोर के साथ नहीं। गाँधी जी मुंशीराम जी को महात्मा लिखते और कहते थे, प्रत्युत्तर में गाँधी जी से प्रभावित महात्मा मुंशीराम ने भी सम्मान देने के लिए गाँधी जी को 'महात्मा' कहा। यह स्वाभाविक ही है।

२. यदि थोड़ी देर के लिए यह मान भी लिया जाये कि श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर ने सर्वप्रथम श्री गाँधी के लिए 'महात्मा' शब्द का प्रयोग किया। यदि ऐसा हुआ भी होगा तो वह व्यक्तिगत और एकान्तिक रहा होगा, सार्वजनिक रूप में प्रयोग और लेखन कविवर टैगोर की ओर से नहीं हुआ तथा न वह सार्वजनिक रूप में हुआ और न उनकी भेंट के बाद वह जनसामान्य में प्रचलित हुआ। यह प्रयोग सर्वप्रथम सार्वजनिक रूप में महात्मा मुंशीराम की ओर से गुरुकुल काँगड़ी से आरम्भ हुआ। उसके पश्चात् ही जन-सामान्य में गाँधी जी के लिए 'महात्मा' प्रयोग प्रचलित हुआ।

३. केन्द्रीय सरकार के अभिलेखों में इसी तथ्य को स्वीकार किया गया है कि श्री गाँधी को सर्वप्रथम गुरुकुल काँगड़ी में 'महात्मा' की उपाधि से विभूषित किया गया। ३० मार्च १९७० को स्वामी श्रद्धानन्द (पूर्वनाम महात्मा मुंशीराम) की स्मृति में भारतीय डाक तार विभाग द्वारा डाक टिकट जारी किया गया था। विभाग द्वारा प्रकाशित डाक टिकट के परिचय-विवरण में निम्नलिखित उल्लेख मिलता है-''उन्होंने (स्वामी श्रद्धानन्द ने) काँगड़ी हरिद्वार में वैदिक ऋषियों के आदर्शों के अनुरूप एक बेजोड़

विद्या-केन्द्र गुरुकुल की स्थापना की।......महात्मा गाँधी जब दक्षिण अफ्रीका में थे तो सर्वप्रथम इसी संस्थान ने उन्हें अपनी ओर आकृष्ट किया और भारत लौटने पर वे सबसे पहले वहीं जाकर रहे। यहीं गाँधी जी को 'महात्मा' की पदवी से विभूषित किया गया।''

४. उत्तरप्रदेश सरकार के सूचना विभाग द्वारा १९८५ में प्रकाशित गाँधीवादी लेखक श्री रामनाथ सुमन द्वारा लिखित 'उत्तरप्रदेश' नामक पुस्तक के 'सहारनपुर सन्दर्भ' शीर्षक में उल्लेख है कि 'हरिद्वार आगमन के समय गाँधी जी को गुरुकुल काँगड़ी में महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) ने 'महात्मा' विशेषण से सम्बोधित किया था, तब से गाँधी जी 'महात्मा गाँधी' कहलाने लगे।'

५. गाँधीजी के गुरुकुल काँगड़ी आगमन के समय वहाँ पढ़ने वाले विद्यार्थियों ने अपने संस्मरणों में, गुरुकुल के स्नातक इतिहासकारों ने अपने लेखों और पुस्तकों में श्री गाँधी के सम्मान-समारोह का और उस अवसर पर उन्हें 'महात्मा' पदवी दिये जाने का वृत्तान्त दिया है। प्रसिद्ध पत्रकार श्री सत्यदेव विद्यालंकार ने लिखा है-''आज गाँधी जी जिस महात्मा शब्द से जगद्विख्यात हैं, उसका सर्वप्रथम प्रयोग आपके लिए गुरुकुल की ओर से दिए गए इस मानपत्र में ही किया गया था।'' ('महात्मा गाँधी और गुरुकुल' पृष्ठ ४८१) इस वृत्तान्त को लिखने वाले अन्य स्नातक लेखक हैं-डॉ. विनोदचन्द्र विद्यालंकार, इतिहासकार डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार, श्री दीनानाथ विद्यालंकार, श्री जयदेव शर्मा विद्यालंकार और डॉ. विष्णुदत्त राकेश आदि। कोई कारण नहीं कि विद्यार्थी अपने संस्मरणों को तथ्यहीन रूप में प्रस्तुत करें। अत: ये विश्वसनीय हैं।

६. श्री गाँधी और महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) दोनों एक-दूसरे के महात्मापन के कार्यों से पहले से ही सुपरिचित थे, इसलिए दोनों के व्यवहार में आत्मीयता और सहयोगिता का खुलापन था। कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर के साथ श्री गाँधी का ऐसा सम्बन्ध नहीं था। दोनों के निकट सम्बन्धों की पुष्टि तीन विशेष घटनाओं से होती है। पहली घटना वह है, जब दक्षिण अफ्रीका में चल रहे श्री गाँधी के सामाजिक आन्दोलन के लिए रु. १५००/- की आर्थिक सहयोग राशि राष्ट्रनेता श्री गोपालकृष्ण गोखले के माध्यम से गुरुकुल काँगड़ी के द्वारा भेजी गई थी। यह राशि गुरुकुल के विद्यार्थियों ने सरकार द्वारा सन् १९१४ में गंगा पर बनाये जा रहे 'दूधिया बाँध' पर दैनिक मजदूरी करके और एक मास तक अपना दूध-घी त्यागकर उसके मूल्य से एकत्रित करके भेजी थी। इस मार्मिक घटना को सुनकर गाँधी जी का हृदय द्रवित हो गया था। उन्होंने अनेक लेखों में इसकी चर्चा की है।

दूसरी घटना यह थी कि सन् १९१५ में जब श्री गाँधी दक्षिण अफ्रीका को छोड़कर भारत आ रहे थे तो उन्होंने स्वस्थापित फीनिक्स आश्रम के विद्यार्थियों को भी भारत भेज दिया। श्री टैगोर के आश्रम शान्ति निकेतन (तत्कालीन नाम ब्रह्मचर्याश्रम) में उनके निवास एवं खान-पान का प्रबन्ध सुचारु रूप से नहीं हो सका। तब गाँधी जी ने उन विद्यार्थियों को महात्मा मुंशीराम के पास गुरुकुल काँगड़ी में भेज दिया। वहाँ वे अच्छे प्रबन्ध के साथ दो महीनों तक रहे। जब गाँधी जी गुरुकुल में प्रथम बार पधारे थे तो उन्होंने अपने वक्तव्य में दोनों सहयोगों के लिए महात्मा मुंशीराम और विद्यार्थियों के प्रति आभार व्यक्त किया था।

तीसरी घटना यह है कि स्वामी श्रद्धानन्द की एक मुस्लिम हत्यारे के द्वारा हत्या होने के पश्चात् ९ जनवरी १९२७ को गाँधी जी बनारस गये। वहाँ गाँधी जी और श्री मदनमोहन मालवीय जी ने स्वामी श्रद्धानन्द के सिद्धान्तों के स्वानुकूल न होते हुए भी अपनी हार्दिक श्रद्धाञ्जलि व्यक्त करने के लिए उनके लिए गंगा में जलांजलि प्रदान की और गंगा-स्नान किया।

पाठक इन घटनाओं से अनुमान लगा सकते हैं कि उस समय के राष्ट्रनेताओं का स्वामी श्रद्धानन्द के प्रति कितना श्रद्धाभाव था और उनके कितने गहरे सम्बन्ध थे।

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इस से गृहस्थजन विशेष कर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४

परोपकारी क्या है?

(आचार्य श्री पं. पद्मसिंह जी शर्मा के सम्पादकत्व में 'परोपकारी' मासिक का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ था। उसमें प्रकाशित महाकवि नाथूराम शर्मा 'शंकर' की यह कविता प्रस्तुत है-)

- सतीश शुक्ल

- निश्शंक सत्यवादी सेवक महेश का है,
प्रख्यात पक्षपाती ब्रह्मोपदेश का है।
संसार का सँगाती साथी स्वदेश का है,
प्यारा प्रतापशाली प्यारे प्रजेश का है।
आदर्श है दया का आनन्द-वन-बिहारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।१।।

- विज्ञान बुद्धबाधक अज्ञान-मार का है,
देखो असीम सागर गहरे विचार का है।
अवतार तर्कमूलक सद्धर्म सार का है,
सीधा विशुद्ध साधन सबके सुधार का है।
वैदिक समाज का है सन्मित्र धीर-धारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।२।।

- बाहुल्य सद्‌गुणों का दुर्भिक्ष दोष का है,
अधिकार है कृपा का प्रतिकार रोष का है।
मुख मंजु घोष का है यश आशुतोष का है,
प्रियपद्मराग-रूपी रस पद्म-कोष का है।
लो साधु-चंचरी को यह भेंट है तुम्हारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।३।।

- जो शक्ति-शर्वरी से मन को मिला रहा है,
चिन्ता-चकोरनी के कुल को जिला रहा है।
कविता-कुमुदिनी की कलियाँ खिला रहा है,
पीयूष नवरसों का हमको पिला रहा है,
वह चन्द्रमा यही है, साहित्य-व्योमचारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।४।।

- शृंगार का विषैला शोणित निचोड़ देगी,
कौटिल्य बाँकपन के उर पेट फोड़ देगी।
कामादि के कंटीले सब जोड़ तोड़ देगी,
आलस्य को अछूता जीता न छोड़ देगी।
पाखण्डखण्डिनी है, इसकी कला-करारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।५।।

- प्राचीन पुस्तकों से भण्डार भर चुका है,
अनुभूत आगमों का ध्रुव ध्यान धर चुका है।
भाषा सुधारने का संकल्प कर चुका है,
कुत्सित कथानकों के परिकर कतर चुका है।
इसने महज्जनों की महिमा मुँदी उधारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।६।।

- जिसके लिए अयोगी अटकल लगा रहे हैं,
जिसके लिए प्रमादी धन को ठगा रहे हैं।
भ्रम-भ्रान्ति से सुलाकर जिसको जगा रहे हैं,
अवतार दूत जिसके भय को भगा रहे हैं।
उस देव की दिखादि इसने विभूति सारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।७।।

- जो मूढ़-मण्डली के आगे अड़े हुए हैं,
जो ठोकरें ठगों की खाते खड़े हुए हैं।
जो जन्म-कुण्डली में डूबे पड़े हुए हैं,
जो कुल कुलक्षणों में लक्षण झड़े हुए हैं।
उनकी अटक उलूकी इसने मसोस मारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।८।।

- जो लोग झंझटों के झण्डे उड़ा रहे हैं,
झगड़े बढ़ा-बढ़ा कर छक्के छुड़ा रहे हैं।
बिन बात जूझने को रस्से तुड़ा रहे हैं,
हा, एकता-तरी को जिसमें बुड़ा रहे हैं।
वह नाश-नद न इसको दे वैर-वारि-खारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।९।।

- जो सर्वनाश-नद में जीवन डुबो चुका है,
दुर्दैव का सताया, दिन-रात रो चुका है।
कगांल मन्दभागी कुल को भिगो चुका है,
खोकर स्वतन्त्रता को परतन्त्र हो चुका है।
उस देश की भलाई इसने नहीं बिसारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।१०।।

- निर्दोष वेद-विद्या सबको सिखा रहा है,
विद्वान्-दीपकों में बनकर शिखा रहा है।
जिसके सुलेखकों से लक्षण लिखा रहा है,
उस देवनागरी के रूपक दिखा रहा है।
इसके महाशयों की टकसाल है करारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।११।।

- ऊँचा चढ़ा रहा है गुण-गेह ज्ञानियों को,
नीचा गिरा रहा है मिथ्याभिमानियों को।
आदर दिला रहा है निष्काम दानियों को,
झूठी बता रहा है, कोरी कहानियों को।
इसका विवेक-बल है पूरा प्रमाद-हारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।१२।।

- अविकल्प योग-बल को जिनमें प्रधानता है,
उन सिद्ध योगियों को निर्बन्ध जानता है।
विद्या-विशारदों के सद्गुण बखानता है,
व्रतशील सज्जनों को सन्मित्र मानता है।
इसको नहीं सुहाते ठग, आलसी, अनारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।१३।।

- जिसकी दयालुता ने आनन्द-फल दिया है,
जिसकी प्रवीणता ने विज्ञानपथ दिया है।
जिसकी महानता ने भरपूर यश लिया है,
जिसकी उदारता ने सबका भला किया है।
है इष्टदेव इसका, वह बाल ब्रह्मचारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।१४।।

- विधवा बड़े घरों की महिमा घटा रही है,
गायें गले कटातीं चर्बी चटा रही हैं।
बातें विदेशियों की सौदा पटा रही हैं,
देशी सुधारकों से हमको हटा रही हैं।
ऐसी कड़ी कुचालें इसको लगें न प्यारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।१५।।

- रस भंग तुक्कड़ों के आसन उखाड़ देगा,
कविता कलंङ्किनी को लम्बी लताड़ देगा।
उदण्ड गायकों के मुखड़े बिगाड़ देगा,
करताल तोड़ देगा फिर ढोल फाड़ देगा।
कविराज की करेगा गुणगान से सुखारी,
शंकर सरस्वती का वर है परोपकारी।।१६।।

भूल-सुधार

प्रिय पाठको! परोपकारी दिसम्बर प्रथम अंक के पृष्ठ ३८ पर 'समर्पित से भी अधिक समर्पित डॉ. धर्मवीर जी' लेख की पहली पंक्ति में पहला शब्द भूलवश उदयपुर छप गया है। वह **उदयपुर** न होकर **जोधपुर** है।

पाठकों को हुई असुविधा के लिये खेद है।

राजा और प्रजा जन परस्पर सम्मति से समस्त राज्य व्यवहारों की पालना करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ६.२६

जैसे मेघ वर्षा समय में अपने जल के समूह से सब पदार्थों को तृप्त करता हुआ उन्नति देता है वैसे ईश्वर भी योगाभ्यास करने वाले योगी पुरुष के योग को अत्यन्त बढ़ाता है। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.४०**

जब तक मनुष्य सुख-दुःख, हानि और लाभ की व्यवस्था में परस्पर अपने आत्मा के तुल्य दूसरे को न जानते तब तक पूर्ण सुख को प्राप्त नहीं होते, इस से मनुष्य लोग श्रेष्ठ व्यवहार ही किया करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४०

शाश्वत-स्वर

- धर्मवीर

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम।।

- यजु-५-३६

बड़ा सुपरिचित मन्त्र है। मन्त्र कुछ इस प्रकार का है कि जहाँ पर सारे प्रयत्नों की समाप्ति दृष्टि-गोचर होती है, उपासक अपनी समस्त सामर्थ्य प्रभु को समर्पित कर चुका है, स्वयं को उसकी शरण में डाल चुका है, उसकी इच्छानुसार चलने के लिये अपना मानस बना चुका है। अत: प्रभु से कह रहा है कि अब आप ही ले चलो-मेरे चलने से पहुँचना सम्भव नहीं है, बिल्कुल नहीं है।

मन्त्र में ईश्वर को अग्नि-रूप में देखा गया है। अग्नि क्रिया का सर्वाधार है, अग्नि के अभाव में क्रिया सम्भव ही नहीं है, फिर संसार की गति बिना अग्नि के कैसे सम्भव है, तो वह स्वयं अग्नि है, अग्नि-रूप है, प्रकाश, ज्ञान, क्रिया का भण्डार है।

वह अग्नि ही है, अग्नि उसका ही नाम है। उसको अग्नि के रूप में ही प्रत्यक्ष किया है। भक्त जानता है-इस अग्नि के सिवाय चेतना और क्रिया का अनन्त भण्डार कहीं और नहीं है। संसार का सारा प्रकाश उसी अग्नि से प्रकाशित है। आँख उसी के सामर्थ्य से देख पाती है, सूर्य उसी के प्रकाश से प्रकाशित है, संसार की प्रत्येक वस्तु उसी से गतिमान् है।

अग्नि स्थूल को सूक्ष्म की ओर ले जाता है। सूक्ष्म बना देता है, अदृश्य कर देता है, परन्तु प्रभाव बढ़ जाता है। स्थूल का प्रभाव कम है, परन्तु सूक्ष्म होकर क्षमता बढ़ती है। अग्नि ऊर्ध्वगामी है, कहीं भी-कभी भी उसका स्वरूप दृष्टि में आया, तो वह ऊपर की ओर ही जाने वाला होगा। सूक्ष्म होगा तो ही ऊपर की ओर उठ सकेगा। स्थूल की तो अधोगति अवश्यम्भावी है, अत: अग्नि सूक्ष्म है, ऊर्ध्वगति वाला है, व्यापक है। अपने साथ-साथ दूसरों को भी विस्तृत करने की, व्यापक करने की क्षमता रखता है-वह ज्ञान का प्रकाश गति का कारण है। समिधा को प्रज्वलित कर अपने साथ प्रकाशित करता है, समिधा के साथ जलता है, उसे जलाता है। प्रकाशित होता है समाप्त हो जाता है, समाप्त कर देता है, परन्तु वास्तव में समाप्त नहीं होता न करता है। वह तो सूक्ष्म-व्यापक होकर अदृश्य होता है, स्थूल दृष्टि से ओझल हो जाता है। भक्त समिधा है, तभी तो परमेश्वर को अग्नि के रूप में देख पाता है। गुरु के पास शिष्य समित्पाणि होकर जाता है, बिना समिधा बने कुछ नहीं पाया जा सकता है। समिधा बनना स्वयं को जलने के लिये, अग्नि में ढलने के लिये तैयार करना है, उसके लिये अपने को समर्पित कर देना है, कहीं कमी रही तो बात बनेगी नहीं। समिधा गीली रही तो जलेगी नहीं। जल्दी नहीं जलेगी, बहुत धुआँ होगा, प्रकाश नहीं होगा। अत: समिधा की, सूखी हुई समिधा की आवश्यकता है, तभी समिधा बना भक्त परमेश्वर को अग्ने कहता है।

अग्नि को प्रार्थना करता है-सुपथा नय! आश्चर्य है-चलने के लिये पैर दिये हैं, विवेक के लिये, पथ की पहचान के लिये बुद्धि दी है, परन्तु भक्त जानता है कि इन पैरों से वहाँ नहीं पहुँचा जा सकता है, भटका जा सकता है। संसार में भटकता रहता है, भटकता रहेगा, जब तक वह यह नहीं समझ लेगा कि इन पैरों से नहीं चला जा सकता, वहाँ तक नहीं पहुँचा जा सकता। तब उपासक कहता है-हे अग्ने! नय-ले चल, ले जा। आज तक मैं जो भी चला, जो चलने का दम्भ किया, वह तो व्यर्थ ही है-न मैं चला, न मैं चल सकता हूँ। आप ही ले चलो, मैं आपकी शरण में हूँ। आप जहाँ ले जायेंगे, वास्तव में वही सुपथ है। जिसे मैं सुपथ समझ रहा था, वह तो पथ ही नहीं है, अन्धकूप है। मैं उसमें चलने के भ्रम में पड़ा रहा- मैं तो अब समझा हूँ कि सुपथ तो तेरे बिना होता ही नहीं, इसलिये अग्ने! मुझे सुपथ पर ले चल।

जब मैं जानता था कि मैं जानता हूँ, तब मेरा अहंकार मुझे कुछ जानने नहीं देता था। मैं जानने के स्थान पर जानने के दम्भ में जीता रहा हूँ। जब मैंने तुझे, ज्ञान के सागर को जाना है तो मैंने जाना है कि मैं कुछ भी नहीं जान पाया हूँ, मैं कुछ भी जानने में समर्थ नहीं। मैं एक तुच्छ कण से

स्वयं को जानने वाला समझता रहा हूँ। हे अग्ने! आप ज्ञानमय हो- प्रकाशमय हो, आप ही मुझे ले चलो, अपने मार्ग से ले चलो-मैं आपके बिना नहीं चल पाऊँगा।

मैंने सोचा था मेरा सामर्थ्य बहुत है, मैं सारे संसार का ऐश्वर्य एकत्रित कर लूँगा, सारा सुख मेरे पास होगा। मैंने जीवन भर प्रयत्न करके बहुत इकट्ठा किया, बड़े-बड़े महल खड़े किये, बहुत सारी भूमि का अधिपति बना और बहुत सम्पत्ति भी एकत्रित की। सारा संसार मेरी प्रशंसा करता था, परन्तु आज मैं देखता हूँ कि मैंने सारी आयु और सारा सामर्थ्य पत्थरों के ढोने में लगा दिया और एक मजदूर जितना भी नहीं पा सका-जो पत्थर तो ढोता है, परन्तु बदले में कुछ पाकर सन्तुष्ट हो जाता है, परन्तु मैं देखता हूँ जिसको मैं ऐश्वर्य समझता था, वह धन है ही नहीं। जिसको मैं सुख समझता रहा, वह तो दु:ख का ही मूल है। भला मैं उससे सुख किस प्रकार प्राप्त कर सकता हूँ? इसलिये मेरा चला पथ सुपथ नहीं था, कभी भी नहीं हो सकता। सुपथ तो वही है जो रयि को, वास्तविक धन को, सत्यसुख को प्राप्त करा सके, वहाँ तक पहुँचा सके। इसलिये आप ही सुख को जानते हो। हे देव! सारे कर्मों को, सारे ज्ञान को आप ही जानते हो, अत: आप ही सुमार्ग पर लेकर चलो, दूसरा कोई ऐसा करने में समर्थ नहीं होगा।

अब तो मेरा यह सामर्थ्य भी नहीं कि मैं अपनें को पाप से अलग कर सकूँ। मेरे संस्कार इस प्रकार के हो गये हैं कि जन्म-जन्मान्तर की छाया मेरे चित्त पर सञ्चित हैं। मैं बहुत प्रयत्न करता हूँ, परन्तु संस्कार उसी ओर ले जाता है, जहाँ से दूर होना चाहता हूँ। क्योंकि पाप का मार्ग सीधा नहीं होता, वह टेढ़ा-मेढ़ा होता है, उसमें आँख-मिचौनी हैं, हर मोड़ पर आगे कुछ पाने की आशा है, और प्रलोभन बढ़ता ही जाता है। मेरा सारा प्रयत्न पाप से छूटने का धरा का धरा रह जाता है। आश्चर्य होता है कि टेढ़े मार्ग पर चलने का, बुराई करने का सामर्थ्य मुझमें कहाँ से आता है और सुपथ पर, सरल पथ पर चलना आसान होना चाहिए, उधर कदम ही नहीं उठते। क्यों नहीं उठते? यही तो मैं नहीं जान पाया।

ज्ञानी कहते हैं कि धार्मिक वह है जो सरल है। पता नहीं सब धार्मिक क्यों नहीं हो पाते। जो सहज है, सरल है, वह कठिन है। जो टेढ़ा है, कुटिल है, दुर्लभ है, वही सरल प्रतीत होता है। इस संसार की रीत ही कुछ ऐसी है, यहाँ धर्म कठिन लगता है, अधर्म सरल। सत्य अस्वाभाविक लगता है, झूठ सहज। ईमानदारी अनहोनी लगती है, बेईमानी आदत। तभी तो मैं छूट नहीं पाता हूँ। हे अग्ने! मुझे-सरल और सहज होना ही तो नहीं आता। प्रभु, तुम ही मुझे कुटिल मार्ग की कठिनता से हटाकर पुण्य के सहज सरल मार्ग का पथिक बना सकते हो। यही मेरी बारंबार आपसे प्रार्थना है। मैं प्रार्थी होकर, याचक होकर, आपकी शरण में आया हूँ। मैं नमन करता हूँ, बार-बार करता हूँ-मेरा मुझ में अब कुछ भी नहीं बचा। मैं तो जैसा भी हूँ, तेरे आधीन हूँ। यह नम्रता निरभिमानता ही सरलता का आधार है। जब नम्रता आ गयी, फिर कुछ करना शेष नहीं रहा। सारे शास्त्र, सारे उपदेश, सारी साधना यहाँ तक पहुँचने के लिये है। यहाँ से आगे जाने का सामर्थ्य तो किसी में नहीं-वह तो सब ईश्वर की इच्छा से ही संभव है।

जब एक बार बरेली में स्वामी दयानन्द के भाषण हो रहे थे तो प्रतिदिन ईश्वर के अस्तित्व पर नवयुवक मुन्शीराम तर्क करते थे। अन्तिम दिन युवक मुन्शीराम ने कहा मुझे तर्क से तो आपने निरुत्तर कर दिया, परन्तु विश्वास नहीं हुआ। तब महाराज ने उत्तर दिया-नवयुवक! यह तो ईश्वर की इच्छा से होगा। जब प्रभु चाहेंगे, तब तुम्हारी आत्मा में प्रकाश होगा।

बस यही सूत्र है जो विश्वास का आधार है-

भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम।

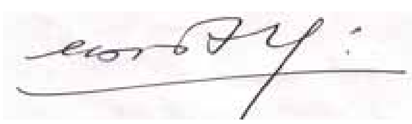

विद्वान् स्त्रियों को योग्य है कि अच्छी परीक्षा किए हुए पदार्थ को जैसे आप खायें वैसे ही अपने पति को भी खिलावें कि जिससे बुद्धि, बल और विद्या की वृद्धि हो और धनादि पदार्थों को भी बढ़ाती रहे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४२

वैचारिक क्रान्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन-चरित्र प्रचार-प्रसार की भव्य योजना

विचार किसी भी देश, समाज व जाति की अमूल्य निधि (सम्पत्ति) है। जिसके पास में ठोस श्रेष्ठ विचार नहीं या फिर विचार को फैलाने के साधन नहीं हैं या फिर जो व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपने विचारों की अवहेलना करते रहते हैं, उनका अस्तित्त्व भी एक दिन समाप्त प्राय: हो जाता है। आज हर सम्प्रदाय, समाज, समूह व देश अपने विचारों का प्रचार-प्रसार बड़ी प्रबलता से हर क्षेत्र में व हर साधन से कर रहा है, लेकिन काफी समय से आर्यसमाज में वैचारिक शिथिलता देखी जा रही है। इस शिथिलता को दूर करने का मात्र एक ही उपाय है कि हम सभी आर्य जन ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत **अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का प्रचार नये शिक्षित लोगों में करें।** इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर सभा के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला दिल्ली में वर्ष २०१४ से लगातार इन ग्रन्थों का नि:शुल्क वितरण किया जा रहा है। प्रचार-प्रसार की योजना तैयार की गयी है।

सत्यार्थप्रकाश ही क्यों?-१. यदि कोई व्यक्ति, समाज, समूह, संस्था या राष्ट्र एक ग्रन्थ (पुस्तक) पढ़कर विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो यह सत्यार्थप्रकाश से ही सम्भव है। **२.** आज के दूषित वातावरण में वैदिक वाङ्मय को ठीक-ठीक जानने हेतु, पढ़ने-पढ़ाने हेतु प्रथम सत्यार्थप्रकाश और महर्षि के अन्य ग्रन्थों का पढ़ना-जानना अत्यन्त आवश्यक है। **३.** दर्शनशास्त्र, इतिहास, भारतीय परम्परा, कर्त्तव्य, धर्म-अधर्म, उचित-अनुचित, न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य तथा मानवता आदि क्या हैं? - यह सारी जानकारी सत्यार्थप्रकाश से प्राप्त होती है व होगी। **४.** पाखण्ड, मक्कारी, कुरीतियों व बुराइयों का नाश भी सत्यार्थप्रकाश से सम्भव है। **५.** सत्यार्थप्रकाश व ऋषि के अन्य ग्रन्थों की उपस्थिति में कोई विधर्मी अपनी शेखी नहीं मार सकता तथा किसी भी हिन्दू को बहकाकर विधर्मी नहीं बना सकता। **६.** सत्यार्थप्रकाश के प्रभाव ने न जाने कितनों का जीवन ही बदल डाला। सत्यार्थप्रकाश के जोड़ की दूसरी पुस्तक दुर्लभ है, जिसमें ज्ञान का अमूल्य खजाना भरा पड़ा है। इसलिए इसका प्रचार-प्रसार अनिवार्य है, जरूरी है। **योजना का विवरण निम्न प्रकार का होगा-१.** सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में आकार लगभग ६०० पृष्ठ व साईज डिमाई आकार में होगा। लागत मूल्य १००/- रुपये प्रति पुस्तक। **२.** ऋषि जीवन चरित्र हिन्दी में लगभग १६४ पृष्ठ व साईज डमई आकार में। लागत मूल्य ६०/- रुपये प्रति पुस्तक। **३.** महर्षि द्वारा रचित पुस्तक आर्याभिविनय हिन्दी में ६४ पृष्ठ व साइज डिमाई आकार में, लागत मूल्य ३०/- रु. प्रति पुस्तक।

नोट-यह साहित्य वैचारिक क्रान्ति के लिए व वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार के लिए गैर आर्यसमाजी सज्जनों व संस्थानों आदि को नि:शुल्क या अल्प मूल्य में वितरित किया जायेगा। साहित्य का ठीक-ठीक उपयोग हो व योग्य शिक्षित विचारवान् व्यक्तियों तथा संस्थानों तक पहुँचे इसके लिए अच्छी वितरण व्यवस्था की जाएगी। योग्य प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का चयन कर कार्य में नियुक्त किया जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति, संस्था आदि से एक फार्म भरवाया जायेगा, जिसमें उनका पूर्ण पता सम्पर्क आदि हो, जिससे भविष्य में परिणाम का मूल्यांकन किया जा सके। ग्रन्थों की प्रामाणिकता, शुद्धता व साज-सज्जा सुन्दरता का विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस प्रचार-प्रसार योजना का उद्देश्य सत्यार्थप्रकाश व महर्षि के जीवन-चरित्र के प्रचार-प्रसार के माध्यम से मानव मात्र का कल्याण करना है। यह प्रचार-प्रसार मुख्य रूप से शिक्षित गैर आर्यसमाजी लोगों के लिए होगा। यह कार्य पूर्णरूप से महर्षि के मन्तव्यों के अनुरूप हो इसका विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस कार्य की सफलता के लिए सभी आर्यजनों से, समाजों से व संस्थानों से निवेदन है कि इस महान् कार्य में तन-मन-धन से अपना सहयोग करने व अपने इष्ट मित्रों को भी सहयोग करने की प्रेरणा करें।

नोट-अपना आर्थिक सहयोग आप परोपकारिणी सभा अजमेर के नाम प्रेषित करते समय **सत्यार्थप्रकाश प्रचार-प्रसार शीर्षक** अवश्य लिखें। धन प्रेषित करने हेतु आप चैक, ड्राफ्ट व सीधे राशि सभा के बैंक खाते में जमा करवाकर जमा पर्ची की प्रतिलिपि प्रेषित कर देवें या फिर ईमेल, दूरभाष द्वारा सूचित कर सकते हैं। धन्यवाद।

खाता धारक का नाम-**परोपकारिणी सभा, अजमेर।**
१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

नोट : इस योजना हेतु दिया गया दान आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत कर मुक्त होगा।

सम्पर्क : मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

ईश्वर-परिचय

-प्रकाश चौधरी

यह सृष्टि अपने आप में ईश्वर-परिचय है। सूर्य, चाँद, पृथ्वी, लोक-लोकांतर और इनका संचालन किसी शक्ति का परिचय दे रहा है। जगत् का सत्ता में आना ही अपने आप में ईश्वर-परिचय है।

वह महामहिम है। उसकी महिमा के सम्मुख जगत् की हर सत्ता तुच्छ है। वह 'पर' है, 'परम' है सर्वोत्कृष्ट है, इसीलिए परमात्मा, परमेश्वर, परमदेव आदि नामों से स्मरण किया जाता है। वह इन्द्र है, उसके बल, विस्तार और यश का वर्णन नहीं हो सकता। कोई भी सांसारिक वस्तु उसका उपमान नहीं बन सकती। वह बेमिसाल है। ईश्वर वज्रधर है, पापी आत्माओं को दंड देने वाला है। जड़-चेतन सबका आश्रयदाता है।

वैदिक संस्कृति के अनुसार ईश्वर निराकार, अजन्मा, अगोचर, अमर, अनंत, निर्विकार, सीमा से परे है। यह जगत् जो दृश्यमान् है, वह केवल उसका एक चरण है। शेष तीन चरण तो पहुँच से, शायद कल्पना से भी परे हैं।

पौराणिक विचारधारा के अनुसार व अपनी-अपनी कल्पना के अनुसार ईश्वर को कितने रूप दे दिए गये हैं और दिए जा रहे हैं। वे उसे एक मूर्ति में बाँधकर रख देना चाहते हैं। वे सत्य से दूर भागते हैं। ईश्वर बंधन रहित है। सर्वत्र एवं सर्व-व्यपाक है। वह एकदेशीय नहीं। वह कण-कण में विद्यमान है। वह उस काल्पनिक मूर्ति में भी है, परन्तु उसकी सारी शक्तियों तथा गुणों से मूर्ति परिपूर्ण नहीं। उसकी चेतन-शक्ति, उसका आनन्द-रस मूर्त्ति में विद्यमान नहीं। वह सब तो उसकी अपनी बनाई हुई मूर्तियों में ही है। आनन्द-रस तो वह स्वयं ही है। हर आत्मा को उसके उस आनन्द-रस की तलाश है। ईश्वर ही हमारा मनभावन है। क्योंकि वही चेतन शक्ति है, ज्ञान स्वरूप है, प्रकाशमय है, ज्योतिपुञ्ज है। उसी के प्रकाश से यह जगत् प्रकाशमय है। हर कार्यशक्ति उसी की शक्ति से प्रेरित और गतिशील है। वह है तो हमारी सत्ता है। उसका नियंत्रण हट जाए तो यह जीवन निराधार होकर ढह जाए, क्योंकि वह ही सारे जगत् का आधार है।

ईश्वर ''सत्पति'' है। विलक्षण रक्षक है। वह विश्व की रक्षा अकेला ही करता है। उसे इस कार्य के लिए किसी से सहायता की आवश्यकता नहीं। वह सर्वशक्तिमान् एवं भयहीन है। प्रभु 'अग्नि' है। अग्नि-स्वरूप है। बाह्य जगत् में आदित्य रूप में प्रकाश प्रदान करता है। सबके हृदय अन्तरिक्ष में भी प्रकाश उत्पन्न करता है। मार्ग-दर्शन करता है। वह 'जातवेदा' है। सब कुछ जानता है, क्योंकि वह सर्वज्ञ एवं सर्वव्यापक है।

स्वामी दयानन्द जी ने अपनी रचना 'आर्योद्देश्यरत्नमाला' में ईश्वर परिचय देते हुए कहा है कि ''ईश्वर वह है जिसके गुण, कर्म, स्वभाव और स्वरूप सत्य ही हैं, जो केवल चेतनमात्र वस्तु है तथा जो एक अद्वितीय, सर्वशक्तिमान, निराकार, सर्वत्र, व्यापक, अनादि और अनंत आदि सत्य गुणों वाला है। और जिसका स्वभाव अविनाशी, आनन्दी, शुद्ध, न्यायकारी और अजन्मा आदि है, जिसका कर्म जगत् की उत्त्पति, पालन और विनाश करना तथा सब जीवों को पाप पुण्य के फल ठीक-ठीक पहुँचाना है, उसको ईश्वर कहते हैं।''

देव दयानन्द जी की इस ईश्वरीय परिभाषा के उपरान्त कुछ भी शेष नहीं बचता, जो वर्णन किया जाए। फिर भी वह अनन्त है। साधक उसका वर्णन तथा व्याख्या करके भी 'चरैवेति चरैवेति' कहकर उठ खड़े होते हैं।

वेदों में अधिकतर मन्त्रों में उस प्रभु का परिचय, उसकी स्तुति, प्रार्थना तथा उपासना का वर्णन है। कई मन्त्रों में परमेश्वर स्वयं अपना परिचय दे रहे हैं।

सामवेद में परमेश्वर कहते हैं कि ''मैं ऋत का प्रथम जनक हूँ। यह दृश्यमान् जगत्, सूर्य, चंद्र, इनके ग्रहण, संवत्सर, मास, कृष्णपक्ष, शुक्ल-पक्ष, ऋतु, इनका उदय होना, अस्त होना, जितने भी सत्य नियम हैं, उनका प्रथम उत्पादक तथा व्यवस्थापक मैं ही हूँ। सूर्य, चंद्र, वायु, विद्युत, अग्नि, प्राकृतिक देव हैं। आत्मा, मन, चक्षु और शारीरिक देव या ऋषि मुनि उन सबसे मैं पहले का हूँ। साधकों को जिस अमृत की तलाश है, आनंद की खोज है, मैं ही उसका केन्द्र हूँ। यदि आनंद पाना चाहते हो तो मेरी शरण में आओ। मेरी अनुभूति करो और फिर दूसरों को

मार्ग दिखाओ। दूसरों को इसका दान करो।''

परमेश्वर 'अन्न' है। साधकों का भोजन है। जैसे अन्न के बिना शरीर नहीं रह सकता वैसे ही आत्मा एवं साधक ईश्वर के आनन्द-रस को पाए बिना नहीं रहते। ईश्वर 'भोक्ता' भी है। एक ना एक दिन यह सारा चराचर जगत् ही उदर में समेट लेता है।

ऐसे सर्वोत्कृष्ट ईश्वर को पाने के उद्देश्य से ही हमें यह मनुष्य जीवन मिला है। उसकी ही स्तुति, प्रार्थना एवं उपासना करें। कैसे?

परमात्मा 'त्वष्टा' है। ऐसा शिल्पकार जिसने शरीर नगरी दे रखी है। यह देव नगरी है। हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों से सद्ज्ञान एवं कर्म करें, जिससे कि सारे दिव्य भाव इसी नगरी में रहना पसंद करे। ज्ञान का अधिपति आत्मा है जो दिव्य वचनों को प्रवाहित करता रहता है, हम उन्हें अनसुना ना करें। हमारा मन सदा सात्विक विचारों से पूर्ण हो और दिव्य भावनाओं को ही प्रेरित करे। हमारी वाणी सदा मधुर हो। सदा दिव्य वचन ही कहे। दिव्य भाव ही हमारा कवच है। बाह्य और आंतरिक सुरक्षा प्रदान करता है। ईश्वर का परिचय पाना ही केवल उद्देश्य न हो, उसके गुणों को धारण कर अपना तथा समाज का उत्थान करें। चारों ओर दिव्य भावों एवं शान्ति का वातावरण हो और अपने परम-लक्ष्य उस परमपिता को पाने, उसकी अनुभूति को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हों।

विशेष सूचना

परोपकारी-पत्रिका के सभी पाठकों एवं आर्यजनों से निवेदन है कि डॉ. धर्मवीर जी से सम्बन्धित कोई पत्र, चित्र, ऑडियो, वीडियो आदि हों तो कृपया सभा के पते पर भिजवा देवें।

डॉ. धर्मवीर जी के जीवन पर प्रकाशित होने वाले विशेषांक के लिए जिन भी महानुभावों के पास उनसे सम्बन्धित कोई भी संस्मरण या कविता आदि हों, वे भी अतिशीघ्र सभा को भेजने का कष्ट करें, ताकि आपके लेख विशेषांक में प्रकाशित किये जा सकें।

ई-मेल-psabhaa@gmail.com

-मन्त्री, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर-३०५००१ (राज.)

आवश्यक-सूचना

परोपकारिणी सभा की रसीद-बुक (रसीद संख्या ४५५१ से ४६०० तक) ऋषि मेले के समय खो गई है, जिसमें संख्या ४५५१ से ४५८८ तक की रसीदें कटी हुई हैं। इन संख्याओं की रसीदें जिन भी महानुभावों के नाम से काटी गई हों वे कृपया अपनी रसीद की एक फोटो कॉपी सभा के पते पर अवश्य भेज देवें।

- मन्त्री

आचार्य धर्मवीर जी की स्मृति में स्थिर-निधि

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने परोपकारिणी सभा की स्थापना करते समय तीन उद्देश्य रखे थे-

१. वेद और वेदांगादि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने-कराने, पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने, छापने-छपवाने आदि में, **२**. वेदोक्त-धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक-मण्डली नियत करके देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में भेजकर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में। **३**. आर्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण, पोषण और सुशिक्षा में व्यय करें और करावें।

इन कार्यों को करने के लिये सभा का वर्तमान मासिक व्यय लगभग १२ लाख रुपये है, जो कि आर्यजनों के दान पर ही निर्भर है। परोपकारिणी सभा के कार्यकारिणी अधिवेशन सं. २२९ एवं साधारण अधिवेशन सं. १२० के प्रस्ताव १३ में आचार्य धर्मवीर जी द्वारा प्रारम्भ किये गये बृहत् प्रकल्पों (प्रकाशन, प्रचार, अध्यापन आदि) आचार्य धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रुपये की स्थिर-निधि बनाने का संकल्प लिया गया है। आर्यजनों से निवेदन है कि इस पुनीत कार्य में अपना अधिक से अधिक सहयोग प्रदान कर आचार्य जी को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करें।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

- मन्त्री

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग तीन वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,

जयपुर रोड़, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

आस्था भजन (चैनल) पर आर्य विद्वानों के प्रवचन

स्वामी रामदेव जी जन-जन के कल्याण को ध्यान में रखते हुए वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए 'आस्था-भजन' चैनल पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे तक दो घण्टे के बीच वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को प्रसारित करवा रहे हैं।

इस कार्य में परोपकारिणी सभा द्वारा भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रवचनों की आपूर्ति के लिए ऋषि उद्यान में रिकॉर्डिंग-यूनिट चल रही है और लगातार नित नये प्रवचनों की रिकॉर्डिंग की जा रही है। परोपकारिणी सभा ये प्रवचन आस्था-भजन (चैनल) को प्रदान कर रही है।

इन दिनों 'आस्था-भजन' (चैनल) पर प्रतिदिन सायं ७ से ७.२० बजे तक **आचार्य धर्मवीर** के वेद-प्रवचन, ७.३० से ७.५० तक **स्वामी विष्वङ्** के योगदर्शन प्रवचन, ८.३० से ८.५० तक **आचार्य सत्यजित्** के प्रवचन प्रसारित हो रहे हैं। इसी प्रकार आगे भी 'आस्था-भजन' पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे के बीच अन्य विद्वानों के व अन्य विषयों पर प्रवचन प्रसारित होते रहेंगे।

धर्मप्रेमी जन इन प्रवचनों का अधिकाधिक लाभ उठाएँ और अन्यों को भी अधिकाधिक सूचित करें।

'आस्था-भजन' (चैनल) डिश-टी.वी. और डी.टी.एच. पर उपलब्ध है, किन्तु टाटा-स्काई, वीडियोकोन, बिग-टी.वी. आदि पर नहीं आ रहा है। जिनके पास ये नहीं आ रहा है, वे अपने प्रसारक (सर्विस प्रोवाइडर) को बार-बार कह कर प्रेरित करते रहें, जिससे कि ये भी आस्था भजन को प्रसारित करने लगें। ऐसा करके वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में आप भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं। जो केबल से देखते हैं, वे भी अपने केबल ऑपरेटर को कह कर आस्था भजन आरम्भ करवा सकते हैं।

पितृ–यज्ञ

'पितृयज्ञ' दो शब्दों से मिलकर बना है। एक ''पितृ'' और दूसरा 'यज्ञ'।

'पितृ' का अर्थ है पिता। माता और पिता दोनों को भी 'पितृ' कहते हैं। जैसे ''माता च पिता च पितरौ'' (द्वन्द्वैकशेष समास)। 'माता' और 'पिता' दोनों शब्दों का जब द्वन्द्व समास बनाते हैं तो 'पितरौ' बनता है। अर्थात् 'पितृ' का अर्थ है माँ और पिता दोनों।

'पितृ' का प्रथम विभक्त में 'पिता' हो जाता है। कुछ संस्कृत न पढ़े हुये लोग समझते हैं कि 'पिता' जीते हुये बाप को कहते हैं और 'पितर' मरे हुये बाप को, परन्तु यह बात नहीं है। असली शब्द 'पितृ' है। जब उसका कर्त्ताकारक बनाते हैं तो 'पिता' हो जाता है। जब कर्म्मकारक बनते हैं तो 'पितरम्' हो जाता है। कर्त्ताकारक बहुवचन में 'पितरः' होता है। जैसे 'मम पिता गच्छति' का अर्थ है 'मेरा बाप जाता है'। 'पितरम् अपश्यम्' का अर्थ है मैंने बाप को देखा। 'तेषां पितर आयान्ति' का अर्थ है 'उनके बाप आते हैं'।

इस प्रकार 'पितृ' या 'पितर' शब्दों में मौत का कुछ संकेत नहीं है। और यह कहना गलत है कि 'पितृ' या 'पितर' मरे हुये बाप के लिये आता है, जीते हुए के लिये नहीं।

दादे, परदादे या दादी और परदादी के लिये भी 'पितृ' शब्द आता है। 'यज्ञ' शब्द का अर्थ है पूजा, सत्कार। कुछ लोग समझते हैं कि 'यज्ञ' शब्द और 'हवन' शब्द का एक अर्थ है। यह भी गलत है। हवन को भी यज्ञ कहते हैं, परन्तु यज्ञ अन्य अर्थों में आता है। 'यज्' धातु–जिससे 'यज्ञ' शब्द बना है–देवपूजा, संगतिकरण और दान, तीन अर्थों में आती है। इसलिये 'यज्ञ' का अर्थ केवल हवन नहीं है। उदाहरण के लिये 'ब्रह्मयज्ञ' का अर्थ है–स्वाध्याय या ईश्वर का ध्यान। अतिथि–यज्ञ का अर्थ है 'मेहमान की खातिरदारी करना'। यहाँ न तो होम या हवन से सम्बन्ध है, न आहुति देने से, न किसी पशु आदि के काटने से। देखिये मनुस्मृति अध्याय ३, श्लोक ७०–

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृ यज्ञश्च तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्।।

अर्थात् पढ़ने–पढ़ाने का नाम ब्रह्मयज्ञ है। तर्पण को पितृ–यज्ञ कहते हैं। होम देवयज्ञ कहलाता है। पशुओं को भोजन देने का नाम भूतयज्ञ है और अतिथि के सत्कार को नृयज्ञ कहते हैं। हमने यहाँ यह श्लोक इसलिये दिया है कि केवल 'देवयज्ञ' में 'यज्ञ' शब्द का अर्थ 'होम' है। अन्यत्र यज्ञ का अर्थ पूजा और सत्कार ही है।

आश्वालयन गृहसूत्र में भी ऐसा ही है।

अर्थात् **पंचयज्ञो देवयज्ञो भूतयज्ञः पितृयज्ञो ब्रह्मयज्ञो मनुष्ययज्ञ इति तद् यदग्नौ जुहोति स देवयज्ञो यद् बलिं करोति स भूतयज्ञो यत् पितृभ्यो ददाति सः पितृयज्ञो यत् स्वाध्यायमधीते स ब्रह्मयज्ञो यन् मनुष्येभ्यो ददाति स मनुष्य यज्ञ इति तानेतान् यज्ञानहरहः कुर्वीत। (अश्वालयन गृह्यसूत्र तृतीय अध्याय)**

हम ऊपर कह आये हैं कि पितृ का अर्थ है माता, पिता या अन्य पूर्वज। और यज्ञ का अर्थ है सत्कार। इसलिये 'पितृयज्ञ' का अर्थ हुआ माता–पिता आदि की सेवा सुश्रुषा।

इसमें वेद का भी प्रमाण है:–

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः

अर्थात् लड़के को चाहिये कि पिता के व्रतों का अनुसरण करने वाला और माता को प्रसन्न करने वाला हो। अर्थात् सन्तान को माता–पिता आदि गुरुजनों की सेवा करनी चाहिये।

अब एक प्रश्न उठता है कि पितृयज्ञ मरे हुये माता–पिता का होता है या जीते हुओं का। इसमें लोगों का मतभेद है। हम कुँआर के महीनों में लोगों को अपने मरे हुये पितरों का श्राद्ध–तर्पण करते हुए देखते हैं, कुँआर के कृष्ण–पक्ष को लोग 'पितृपक्ष' कहते हैं, क्योंकि इसमें मरे हुये पुरखों का श्राद्ध–तर्पण किया जाता है।

हम अभी कह चुके हैं कि 'पितृ' शब्द में कोई ऐसी बात नहीं, जो मरे हुये माँ–बाप की ओर संकेत करे। अब हम यहाँ यह देखना चाहते हैं कि क्या मरा हुआ भी किसी का बाप या माँ हो सकता है।

मनुष्य नाम है विशेष शरीरधारी जीव का। न तो केवल शरीर को ही मनुष्य कहते हैं। न केवल जीव को।

जब शरीर से जीव निकल जाता है तो उसे मनुष्य नहीं कहते किन्तु 'मनुष्य की लाश' कहते हैं। वह जीव भी मनुष्य नहीं है, क्योंकि वह जीव मनुष्य के अतिरिक्त अन्य शरीर भी धारण कर सकता है। जो आज आदमी के शरीर में है, वह कल मरकर चींटी के शरीर को धारण कर सकता है और परसों कुत्ता, बिल्ली इत्यादि का। सम्भव है कि फिर किसी जन्म में वह मनुष्य का शरीर धारण करे।

इसी प्रकार न तो शरीर को ही माँ या बाप कहते हैं न जीव को। जब तक हमारे माता, पिता, दादी, बाबा जीवित हैं, तब तक वह हमारे माता, पिता, दादी या बाबा हैं। जब मर गये तो उनकी लाश रह जायगी, जिसको जला देंगे। न्याय-दर्शन में कहा है कि-

''**शरीरदाहे पातकाभावात्।**''

- (न्याय-दर्शन अध्याय ३)

अर्थात् लाश के जलाने से पाप नहीं होता। जब हमारे माता-पिता आदि मर जाते हैं और हम उनकी लाश को जला आते हैं, तो कोई हमसे यह नहीं कहता कि तुमने पितृ-हत्या की, तुम पापी हो। क्योंकि जिस चीज को हमने जलाया वह माँ-बाप न थे, किन्तु माँ-बाप की लाशें थीं।

अब प्रश्न होता है कि मरने के बाद हमारे माँ-बाप कहाँ हैं? क्या वह जीव माँ-बाप हैं? कदापि नहीं। उन जीवों की पितृ संज्ञा नहीं। क्योंकि मरने के पश्चात् न जाने उन्होंने कहाँ जन्म लिया। वही जीव सम्भव है कि हमारे ही घरों में नाती पोतों या पुत्र के रूप में जन्म लें। या अपने कर्मानुसार ऊँच या नीच योनियों को प्राप्त हों या यदि परमयोगी हों तो उनकी मुक्ति भी हो जाए। यदि हमारे माता या पिता हमारे पुत्र या पुत्री के रूप में जन्म लेंगे तो हम उनके 'पितृ' होंगे न कि वह हमारे। वस्तुत: माता-पिता आदि सम्बन्ध उसी समय तक है जब तक कि शरीर और जीव संयुक्त हैं? मृत्यु होते ही यह सम्बन्ध छूट जाते हैं।

जब माता-पिता मर जाते हैं तो हम कहते हैं कि हमारे माता-पिता मर गये, परन्तु वह मरते नहीं। जीव तो सदा अमर है। इसीलिये मरे हुये माता-पिता की पितृ संज्ञा केवल भूतकाल की अपेक्षा से होती है, वर्तमान काल की अपेक्षा से नहीं। क्योंकि वह सम्बन्ध केवल भूतकाल में था, अब नहीं। इसीलिये यह कहते हैं कि हमारे पिता धनाढ्य थे, या निर्धन थे, विद्वान् थे या अविद्वान् थे, परन्तु यह कोई नहीं कहता कि आज हमारे माता कुत्ता या घोड़ा हैं या हाथी हैं, क्योंकि हमारा पितृत्व का सम्बन्ध उसी दिन समाप्त हो गया, जिस दिन वे मर गये। इसीलिये पितृयज्ञ केवल जीवित माता-पिता का हो सकता है न कि मरे हुओं का। इसी को चाहे श्राद्ध कह लीजिये चाहे तर्पण। साधारणतया श्राद्ध का मरे हुओं के साथ जो सम्बन्ध है, वह गलत है और वह एक प्रकार की कुप्रथा है। कुँआर को पितृपक्ष कहना गलत है। अगर हमारे माँ-बाप या दादी बाबा जीवित हैं तो हमारे लिये सौभाग्यवश समस्त वर्ष ही पितृपक्ष है, क्योंकि हमको नित्य उनकी सेवा, सत्कार करना चाहिये, परन्तु यदि वह मर गये हैं तो कुँआर में ही कहाँ से आयेंगे। इसलिये श्राद्ध-तर्पण जीते हुओं का होना चाहिये।

यह बात मनुस्मृति के नीचे के श्लोकों से प्रकट होती है:-

देवतातिथिभृत्यानां पितृणामात्मनश्च यः।
न निर्वपति पञ्चानामुच्छ्वसन्न स जीवति।।

- (मनु. ३/७२)

इस पर मन्वर्थ मुक्तावली में कुल्लूकभट्ट की टीका इस प्रकार है:-

देवतेति।। देवता शब्देन भूतानामपि ग्रहणम्। तेषामपि बलिहरणे देवतारूपत्वात्। भृतयः वृद्ध माता पित्रोदयोऽवश्यं सवर्धनीयाः। सर्वत एवात्मानं गोपायेत् इति श्रुत्या आत्मपोषणमप्यवश्यं कर्त्तव्यम्। देवतादीनां पञ्चानां योऽन्नं न ददाति स उच्छ्वसन्नपि जीवित कार्याकरणान्नजीवतीति निन्दयावश्यकर्त्तव्यता बोध्यते।

यहाँ 'पितृ' का अर्थ ''वृद्ध मातापित्रादयो'' अर्थात् ''बूढ़े माँ-बाप'' स्पष्ट दिया है। यह श्लोक भी उसी प्रसंग का है जिसमें पाँच यज्ञों का वर्णन है। इसलिये हमारी यह धारणा ठीक है कि पितृयज्ञ बूढ़े माता-पिता का होता है न कि मरों का। इसमें कुल्लूक भट्ट ने 'अन्न देने' का भी वर्णन किया है। अर्थात् देवता, अतिथि, भृत्य, पितृ और आत्मा को अन्न देना चाहिये। इनमें जब मरे हुये अतिथि, मरे हुये भृत्य, मरे हुये आत्मा का वर्णन नहीं, तो 'पितरों' को ही मरा हुआ क्यों माना जाए? जिस प्रकार अतिथियज्ञ जीवित

अतिथियों का है, इसी प्रकार पितृयज्ञ भी जीवित पितरों का होना चाहिये।

आगे के श्लोक से और भी स्पष्टता होती है:-

ऋषयः पितरो देवा भूतान्यतिथयस्तथा।
आशासहे कुटुम्बिभ्यस्तेभ्यः कार्य विजानता।

- (मनु. ३/८०)

इस पर कुल्लूक भट्ट की टीका है:-

एते गृहस्थेभ्यः सकाशात्प्रार्थयन्ते। अर्थात् ऋषि, पितर, देव, भूत और अतिथि लोग गृहस्थियों से ही अन्न आदि की आशा रखते हैं। इससे भी स्पष्ट है कि ऋषि, देव, पितर और अतिथि सब जीवित ही हैं। मरे हुए नहीं।

अगले श्लोक से तो कोई सन्देह ही नहीं रहता:-

कुर्यादहरहः श्राद्धमन्नाद्ये नोदकेन वा।
पयोमूलफलैर्वापि पितृभ्यः प्रीतिमावहन्।

- (मनु. ३/८२)

अर्थात् (अहरहः) प्रतिदिन श्राद्ध करे। किस प्रकार? अन्न, जल, दूध, मूल, फल से। किसका श्राद्ध करे? पितृभ्यः-पितरों का। किस प्रकार? प्रीतिमावहन् अर्थात् प्रेम से बुलाकर।

यहाँ तीन बातें कहीं हैं। (१) हर दिन श्राद्ध करे। (२) अन्न, जल, दूध, फल आदि से। (३) प्रीतिपूर्वक बुलाकर। यह तीनों बातें जीते हुओं में घट सकती हैं, मृतकों में नहीं। इसमें न तो कुंआर के पितृपक्ष का वर्णन है, न गया के पिण्डदान का, न कौओं को खिलाने का। जीते पिता-माता के लिये, जो बुड्डे हो गये हैं रोज-रोज श्राद्ध करने का विधान है।

फिर यदि मरे हुये पितरों का तात्पर्य होता तो उनको प्रीतिपूर्वक कैसे बुला सकते? क्या वे अपनी-अपनी योनि को छोड़कर आ सकते थे? कदापि नहीं। हम तो कभी नहीं देखते कि कोई जीव कुँआर के कृष्णपक्ष में अपने शरीर को छोड़कर श्राद्ध लेने के लिये जाता हो या जा सकता हो। मरे हुओं का श्राद्ध करना असम्भव और असम्बद्ध कार्य करने की कोशिश करने के समान है।

यहाँ एक प्रश्न उठता है कि संस्कृत शास्त्र में मृतक-श्राद्ध का वर्णन नहीं है। हम मानते हैं। स्वयं मनुस्मृति मृतक-श्राद्ध का बहुत से श्लोकों में वर्णन है। उनके लिये कहीं मांस के पिण्डों का वर्णन है, कहीं अन्य अण्ड-बण्ड बातों का। जैसे

द्वौ मासौ मत्स्यमांसेन त्रीन्मासान् हारिणेन तु।
औरभ्रेणाथ चतुरः शाकुनेनाथ पञ्च वै।।
षण्मासांच्छागमांसेन पार्षतेन च सप्त वै।
अष्टावेणस्य मांसेन रारवैण नवैव तु।।
दशमासांस्तु तृप्यन्ति बराहमहिषामिषैः।
शश कूर्मयोस्तु मांसेन मासानेकादशैव तु।।

- (मनु. ३१, २६८, १६९, २७०)

अर्थात् मछली से दो मास के लिये, हिरण के मांस से तीन मास के लिये, भेड़ के मांस से चार मास के लिये, पक्षियों के मासं से पाँच मास के लिये, बकरी के मांस से ६ महीनों के लिये, चित्र मृग के मांस से सात मास के लिये, एण के मास से आठ, हरु के मास से नौ, सुअर और भैंसे के मांस से दस और खरगोश और कछुवे के मांस से ११ महीनों के लिये पितरों की तृप्ति होती है।

ऐसी अण्ड-बण्ड और हिंसायुक्त बातों को आज कोई पण्डित नहीं मानता। और न कहीं इस प्रकार के श्राद्ध किये ही जाते हैं। बात यह है कि मनुस्मृति में पीछे से स्वार्थी लोगों ने समय-समय पर अपने स्वार्थ की बातें मिलाकर उसको दूषित कर दिया है। इसी प्रकार अन्य शास्त्रों में भी बहुत मिलावट हुई है। बुद्धिमान् लोगों को थोड़े से विचार करने से ही पता चल सकता है।

हम कह चुके हैं कि मृतक-श्राद्ध न केवल अनुचित ही है, किन्तु असम्भव भी है। हमारे पास कोई साधन नहीं है कि यदि हम घोर प्रयत्न करें तो भी उन जीवों को जो अपनी जीवित दशा में हमारे माता-पिता कहलाते थे कुछ खाना पानी पहुँचा सकें। मरकर प्राणी की दो ही दशा हो सकती हैं। या तो मुक्त हो गये या जन्म-मरण के फेर में हैं। यदि मुक्त हो गये हों तो मुक्त जीवों को खाना-पानी या श्राद्ध-तर्पण से क्या प्रयोजन? वह तो परमगति को पहुँच चुके। प्राकृतिक पदार्थों से उनका कुछ सम्बन्ध नहीं रहा। यदि वे जन्म ले रहे हैं और पशु, पक्षी या मनुष्य की योनि में हैं तो उन तक हम उनके शरीरों द्वारा ही पहुँच सकते हैं। केवल नदी में जलदान करने या ब्राह्मणों को खिलाने, या कौओं को खिलाने से उन तक कुछ भी नहीं पहुँच सकता।

अतः यह सब व्यर्थ और भ्रममूलक है।

कुछ लोग कहते हैं कि हमारे कर्मों का उनको फल मिलता है, परन्तु यह तो महा अनर्थ है। वैदिक-सिद्धान्त में जो करता है, वही भोगता है। एक के कर्म्म का फल दूसरे को मिला करे तो बड़ा अन्याय हो जाए। ईश्वर जन्म तो मरते समय ही देता है। फिर हमारे कर्मों का फल हमारे मरे हुये पितरों को कदापि नहीं पहुँच सकता।

कुछ लोग श्राद्ध इसलिये करते हैं कि इस बहाने से ब्राह्मणों को भोजन देने का पुण्य मिल जाता है, परन्तु वह ठीक बात का विचार नहीं करते। हम ब्राह्मणों को भोजन खिलाने के विरुद्ध नहीं हैं, न कौओं या मछलियों को भोजन खिलाने के। क्योंकि विद्वान्, ऋषि, मुनि अथवा अतिथि ब्राह्मणों को खिलाना अतिथियज्ञ है और कौओं, चीटियों, मछलियों को खिलाना भूतयज्ञ है, परन्तु हमारा विरोध इस अज्ञान और धोखे से है। तुम यदि अतिथि यज्ञ करते हो तो अतिथियज्ञ के नाम से करो। भूतयज्ञ करते हो तो भूतयज्ञ के नाम से करो। करते तो हो भूतयज्ञ या अतिथियज्ञ और नाम रखते हो पितृयज्ञ का इससे खाने वाले और खिलाने वाले दोनों को भ्रम होता है। ब्राह्मणों को यज्ञ कहकर खिलाओ कि हम तुमको खिलाते हैं। कौओं को यह कह कर खिलाओ कि हम पक्षियों को खाना देते हैं। पितरों का बहाना क्यों करते हो! जो काम झूठ और अज्ञान के मिलाकर किया जाता है उससे पुण्य के स्थान में पाप होता है।

सच पूछिये तो मृतक-श्राद्ध का सिद्धान्त वैदिक नहीं है। या तो इसका आरम्भ बौद्धों से हुआ है, जो मृतकों के आत्माओं की पूजा करते थे। या ईसाई-मुसलमानों से लिया है, जो पुनर्जन्म को नहीं मानते। पुराने मिश्र देश वालों को इस बात का ज्ञान न था कि मृत्यु के पीछे जीव का क्या होता है। इसलिये जब कोई मर जाता था तो उसकी लाश के साथ भोजन आदि भी कब्रों में गाड़ देते थे। वह समझते थे कि लाश को खाने की जरूरत होगी। जब कोई राजा मरता था तो उसकी रानियाँ भी साथ में गाड़ी जाती थीं। आजकल भी ईसाई और मुसलमानों को यह पता नहीं कि मृत्यु के पीछे जीवात्मा का क्या होता है। वह समझते हैं कि कब्र में जीवात्मा रहता है, इसीलिये वह कब्र पर फातिहा पढ़ते हैं, चद्दर चढ़ाते हैं और मन्नत माँगते हैं। वह समझते हैं कि जीव वहाँ मौजूद है। कुछ लोग समझते हैं कि क़यामत के दिन मुर्दे उठेंगे। यह सब 'आत्मा' के तत्व को न समझने और पुनर्जन्म न मानने का फल है। यदि ईसाई, मुसलमान मरे हुओं का श्राद्ध करते तो आश्चर्य न होता, क्योंकि उनको पुनर्जन्म और कर्म्म-व्यवस्था का पता नहीं, परन्तु बड़े आश्चर्य की बात है कि वैदिक-धर्म के मानने वाले हिन्दू भी ऐसे भ्रममूलक काम करते हैं, जबकि उनको आवागमन और कर्मफल-व्यवस्था का ज्ञान है।

वस्तुतः पितृयज्ञ यह है कि हम जीते हुये माता-पिता, आदि की सेवा करें। क्योंकि वह बुड्ढे हो गये हैं। अब वह धन कमाने के योग्य नहीं रहे। उन्होंने हमारे ऊपर उपकार किया है। हमको पाल-पोस कर बड़ा किया। उनका हमारे ऊपर कर्जा है, जिसको पितृऋण कहते हैं। पितृऋण के चुकाने का एकमात्र उपाय पितृयज्ञ है। माता-पिता की सेवा करने से हम अपने ऋण से उऋण होंगे। वह हमको आशीर्वाद देंगे और हमारा कल्याण होगा।

सच पूछिये तो मृतक-श्राद्ध पितृयज्ञ का बाधक है, साधक नहीं। हम नित्यप्रति आँख से देखते हैं कि बूढ़े माँ-बाप को कोई पूछता तक नहीं। वह अनेक प्रकार के कष्ट उठाते हैं। मरने पर उनका बहुत धन लगाकर श्राद्ध किया जाता है।

जियत पिता से दंगमदंगा।
मरे पिता पहुचाये गंगा।।

बहुत से बूढ़े लोग भी भ्रम में पड़े हैं। वे जीते जी खाते नहीं। एक-एक कौड़ी जोड़कर अपने श्राद्ध के लिये छोड़ मरते हैं। इस प्रकार वह अपने कर्त्तव्य की हानि करते हैं। यदि उनको दान ही करना था तो अपने जीते जी दान कर जाते, परन्तु वह दान नहीं करना चाहते, मानों दान को भी स्वार्थ के साथ मिलाकर दूषित कर रहे हैं।

जब तक लोग यह न समझेंगे कि पितृयज्ञ का मृतकों से सम्बन्ध नहीं, उस समय तक लोगों में सच्चे पितृयज्ञ के लिये श्रद्धा न होगी। और माता-पिता की उपेक्षा ही होती रहेगी।

बहाने मत खोजो। जो करना है उसको उद्देश्य समझकर और ज्ञानपूर्वक करो, तभी कल्याण है। गपोड़ों पर विश्वास मत करो।

यू-ट्यूब पर वीडियो प्रवचन उपलब्ध

वेद एवं आर्ष-साहित्य में रुचि रखने वाले आर्यजगत् एवं धार्मिक जनों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब यू-ट्यूब पर अनेक वैदिक आर्य विद्वानों के सैंकड़ों नये-नये प्रवचन उपलब्ध हैं। विश्व में कहीं पर भी इन्टरनेट से जुड़कर ये प्रवचन निःशुल्क सुने-देखे तथा डाउनलोड किये जा सकते हैं। आप जहाँ भी हैं, यदि आपको वैदिक आर्ष-ज्ञान की पिपासा है, वेद एवं आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ आप इन पर विद्वानों के प्रवचन भी सुनना चाहते हैं, तो इन्टरनेट से जुड़कर सरलता से सुन सकते हैं।

इसके लिए you tube पर जाकर playlist of paropkarini sabha लिखकर सर्च करें, तो आपको अनेक प्लेलिस्ट मिलेंगी, यथा- वेद प्रवचन, योग दर्शन, ईशोपनिषद् आदि। इनमें इच्छानुसार जाकर लाभ उठाया जा सकता है। आप अपने परिचितों को यह सूचना देकर उन्हें भी लाभ उठाने को प्रेरित कर सकते हैं। भविष्य में अन्य भी नये-नये प्रवचन इस सूची में उपलब्ध कराये जाते रहेंगे।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर **'मन्त्री, परोपकारिणी सभा'** अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

IFSC - SBIN0007959

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर की पुस्तकों की राशि ऑनलाईन जमा कराने हेतु

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

जिज्ञासा समाधान - १२४

- **आचार्य सोमदेव**

जिज्ञासा- महोदय,

१. वेदानुसार यज्ञोपरान्त ब्रह्मा के महिलाओं द्वारा स्वयमेव अथवा ब्रह्मा के आदेशानुसार चरण-स्पर्श क्या वैध है?

२. वेदानुसार बहुकुन्डीय यज्ञ उचित है अथवा अनुचित?

३. यज्ञ के ब्रह्मा द्वारा यज्ञ में तीन बार दक्षिणा लेना कहाँ तक उचित है?

कृपया सविस्तार समाधान दीजिये। धन्यवाद!

- मन्त्री, रविकान्त राणा, सहारनपुर

समाधान- (क) यज्ञ कर्म वैदिक कर्म है, श्रेष्ठ कर्म है। यज्ञ को ऋषियों ने हमारी दैनिकचर्या से जोड़ दिया है। यज्ञ करने से जो हमारे शरीर से मल निकलता और उससे जो वातावरण दूषित होता है, उसकी निवृत्ति होती है अर्थात् वातावरण शुद्ध होता है। महर्षि दयानन्द ने यज्ञ की बहुत बढ़ाई की है, महर्षि यज्ञ को लोकोपकार का बहुत बड़ा साधन मानते हैं।

महर्षि दयानन्द से पहले यज्ञ रूपी कर्मकाण्ड में बहुत बड़ा विकार स्वार्थी लोगों ने कर रखा था। यज्ञ को अपने स्वार्थ व उदरपूर्ति का साधन बना डाला था। इसलिए उन स्वार्थी लोगों ने यज्ञ में अनेक अवैदिक क्रियाएँ जोड़ दी थीं। जैसे यज्ञों में पशुबलि अथवा पशुओं का मांस डालना आदि। इन अवैदिक कर्मों को यज्ञों में होते देख बहुत लोग यज्ञों से दूर होते चले गये, यज्ञ जैसे श्रेष्ठ-कर्म को हीन-कर्म मानने लग गये। जिससे लोगों की वेद व ईश्वर के प्रति श्रद्धा भी न्यून होती चली गई।

महर्षि दयानन्द ने यज्ञ में किये गये विकारों को दूर कर हमें विशुद्ध यज्ञ-पद्धति दी। जिस यज्ञ-पद्धति में पाखण्ड अन्धविश्वास का लेश भी नहीं है। यदि हम आर्यजन महर्षि की बताई पद्धति का अनुसरण करें तो यज्ञ में एकरूपता आ जावे और पाखण्ड रहित हो जावे। जब-जब हम मनुष्य ऋषियों के अनुसरण को छोड़ अपनी मान्यता को वैदिक कर्मों में करने लगते हैं तो धीरे-धीरे स्वार्थी लोगों की भाँति हम भी पाखण्ड की ओर चले जाते हैं व अन्यों को भी ले जाते हैं।

आजकल बड़े कार्यक्रम करते हुए यज्ञ के ब्रह्मा की नियुक्ति करते हैं, इसलिए कि यज्ञ का संचालन ठीक से हो जाये, लोगों को यज्ञ के लाभ व ठीक-ठीक क्रियाओं का ज्ञान हो जाये। यज्ञ में बने ब्रह्मा का उचित सम्मान करना चाहिए, यह यजमान व आयोजकों का कर्त्तव्य बनता है। वह सम्मान अभिवादन आदि से कर सकते हैं। पुरुष वर्ग ब्रह्मा के पैर छूकर अभिवादन करना चाहें तो कर सकते हैं, किन्तु स्त्री वर्ग सामने आ, कुछ दूर खड़े हो, हाथ जोड़, कुछ मस्तक झुकाकर अभिवादन करें तो अधिक श्रेष्ठ होगा। स्त्रियों द्वारा ब्रह्मा के पैर छूकर अभिवादन करने की परम्परा उचित नहीं, न ही कहीं ग्रन्थों में पढ़ने को मिला। ब्रह्मा को भी योग्य है कि वह स्वयं भी स्त्रियों से पैर न छूवावें, इससे मर्यादा बनी रहती है और एक आदर्श प्रस्तुत होता है। आजकल जो ये परम्परा देखने को मिल रही है, वह पौराणिकों से प्रभावित होकर देखने को मिल रही है, अपने को उनकी भाँति गुरु रूप में प्रस्तुत करने की भावना कहीं न कहीं मन के एक कोने में काम कर रही होती है। जिस गलत बात को महर्षि दूर करना चाहते थे, उसी को ऐसी भावना रखने वाले पोषित करते हैं।

हमारे आदर्श महापुरुष, ऋषि होने चाहिएँ। जैसा आचारण, व्यवहार वे करते आये वैसा करने में ही हमारा कल्याण है। महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन काल में किसी स्त्री को पैर नहीं छूने दिये, महर्षि के इस व्यवहार से भी हम सीख सकते हैं। महर्षि ने ऐसा इसलिए किया कि वे अपने को गुरु(गुरुडम वाले गुरु) के रूप में प्रस्तुत नहीं करना चाहते थे और एक आदर्श प्रस्तुत कर रहे थे। क्योंकि महापुरुष जानते हैं कि जैसा आचरण वे करेंगे, वैसा ही उनके अनुयायी भी करेंगे इसलिए महापुरुष ऐसा आचरण कदापि नहीं करते कि जिससे उनके अनुयायी विपरीत पथगामी हो जायें। इसलिए आर्य-विद्वानों को महिलाओं से पैर छूवाने से बचना चाहिए, बचने में अधिक लाभ है।

(ख) बहुत सारे कुण्ड एक स्थान पर रखकर हवन करने का पढ़ने को तो नहीं मिला, किन्तु यदि निर्लोभ होकर यथार्थ विधि पूर्वक कहीं ऐसे यज्ञों का आयोजन होता है तो इसमें हमें हानि प्रतीत नहीं हो रही। हानि वहाँ है, जहाँ बहुकुण्डिय यज्ञ करने का उद्देश्य व्यापार हो। यजमान से दक्षिणा की बोली लगवाई जा रही हो अथवा एक कुण्ड पर दक्षिणा को निश्चित करके बैठाया जाता हो। यज्ञ करवाने वाले ब्रह्मा की दृष्टि मिलने वाली दक्षिणा पर अधिक और यज्ञ क्रियाओं, विधि पर न्यून हो ऐसे बहुकुण्डिय यज्ञों से तो हानि ही है, क्योंकि यह यज्ञ परोपकार के लिए कम और स्वार्थपूर्ति रूप व्यापार के लिए अधिक हो जाता है।

प्रशिक्षण की दृष्टि से ऐसे यज्ञों का आयोजन किया जा सकता है। जिस आयोजन से अनेकों नर-नारी यज्ञ करना सीख लेते हैं और यज्ञ के लाभ से भी अवगत होते हैं।

(ग) यज्ञ करवाने के बाद यजमान पुरोहित को उचित दक्षिणा अपने सामर्थ्य अनुसार अवश्य देवें, यह शास्त्र का विधान है। यज्ञ की दक्षिणा एक बार यज्ञ सम्पन्न होने पर दी जाती है अथवा यज्ञ सम्पन्न होने पर पुरोहित को दक्षिणा लेनी चाहिए। वह दक्षिणा एक ही बार दी जाती है। तीन-तीन बार लेने वाला भी पुरोहित महापुरुष है, इसका तो आश्चर्य है। आज यज्ञ जैसे परोपकार-रूप कर्म को भी कमाई का साधन बनाते जा रहे हैं। पौराणिक पुरोहित तो धन-हरण के लिए यज्ञकर्म में अनेक अवैदिक लीलाएँ करते हैं, किन्तु आर्यसमाज के पुरोहित द्रव्य के लालच में ऐसी क्रियाएँ कर बैठते हैं। यजमान से संकल्प पाठ करवाते समय पैसे रखवा लेते हैं, यज्ञ की दक्षिणा तो लेते ही हैं। यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद यजमानों व अन्य लोगों को फल व अन्य खाद्य पदार्थ का पुरोहित या ब्रह्मा अपने हाथ से प्रसाद के रूप में वितरण करते हैं, इस वितरण का प्रयोजन द्रव्य प्राप्ति ही है।

तीन-तीन बार दक्षिणा किस प्रकार ले लेते हैं यह तो मेरी भी समझ में नहीं आया। फिर भी जो तीन-तीन बार लेता है सो अनुचित ही करता है। अस्तु।

विशेष सूचना

परोपकारी-पत्रिका के सभी पाठकों एवं आर्यजनों से निवेदन है कि डॉ. धर्मवीर जी से सम्बन्धित कोई पत्र, चित्र, ऑडियो, वीडियो आदि हों तो कृपया सभा के पते पर भिजवा देवें।

डॉ. धर्मवीर जी के जीवन पर प्रकाशित होने वाले विशेषांक के लिए जिन भी महानुभावों के पास उनसे सम्बन्धित कोई भी संस्मरण या कविता आदि हों, वे भी अतिशीघ्र सभा को भेजने का कष्ट करें, ताकि आपके लेख विशेषांक में प्रकाशित किये जा सकें।

ई-मेल-psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर-३०५००१ (राज.)

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३**

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१ से १५ दिसम्बर २०१६ तक)

१. श्री राम निवास व श्रीमती सरला झखेटिया, नेपाल २. श्री राजेश मित्तल, होशंगाबाद ३.श्री किशोर काबरा, अजमेर ४. श्री देवमुनि, अजमेर ५. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर ६. श्री सुमित्रा आर्या, गाँधीधाम ७. श्रीमती सुशीला गंगवार, पीलीभीत ८. श्री मुनीन्द्रपाल सिंह गंगवार, पीलीभीत ९. श्री हरसहाय गंगवार, बरेली १०. कर्नल एस.सी. दीवान, जबलपुर ११. श्री चन्द्रकिरण सिंह, गाजीपुर १२. श्रीमती शकुन्तला आर्या, बीकानेर १३. श्री एम.एल. गोयल, अजमेर १४. श्री वरदीचन्द्र गुप्त, जयपुर १५. श्री अमित कुमार गुप्ता, कोलकाता १६. श्री सत्यनारायण सोनी, अजमेर १७. श्री हँसराज तिवारी, अजमेर १८. श्री शौर्य सूद, नई दिल्ली १९. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, अजमेर २०. श्री कृष्ण सिंह राठी, अजमेर २१. श्री मुमुक्षु मुनि, अजमेर २२. मै. जेनिथ एन्टरप्राइजेज, नई दिल्ली २३. कु. दीप्ति गुप्ता, पंचकुला २४. श्री नागीला प्रभाकर, महबूबनगर २५. श्रीमती रूपा कुमारी राणा, जम्मू-कश्मीर २६. श्री शिवदास बाहेती व श्रीमती शोभा बाहेती, अजमेर २७. श्री विजय कुमार झा व श्रीमती सुनीता झा, जयपुर २८. श्रीमती सुमन आर्या, सोलन २९. श्रीमती सरोज शर्मा, अजमेर ३०. श्री संजीव कुमार अग्रवाल, अजमेर ३१. श्री जितेन्द्र सिंह, अजमेर ३२. श्रीमती उर्मिला जयदेव अवस्थी, जोधपुर ३३. श्री राजेन्द्र सिंह, नई दिल्ली। **- परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१ से १५ दिसम्बर २०१६ तक)

१. श्री कृष्णकान्त वर्मा, दिल्ली २. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर ३. श्रीमती गीता देवी, दिल्ली ४. डॉ. परशुराम पीलीभीत ५. श्री विनोद कुमार, पीलीभीत ६. श्री मुनीन्द्रपाल सिंह गंगवार, पीलीभीत ७. श्री हरसहाय गंगवार, बरेली ८. श्री धर्मदेव, पीलीभीत ९. कर्नल एस.सी.दीवान, जबलपुर १०. श्री चन्द्रकिरण सिंह, गाजीपुर ११. श्री ललितमोहन, अजमेर १२. श्री वरदीचन्द्र गुप्त, जयपुर १३. श्री शान्तिस्वरूप टिक्कीवाल, जयपुर १४. श्रीमती शान्ति भण्डारी, बीकानेर १५. श्री किशन धीरज, उदयपुर १६. श्री अमित कुमार गुप्ता, कोलकाता १७. श्री कृष्ण कुमार त्रिपाठी, अजमेर १८. श्रीमती मनीषा, अजमेर १९. बेबी, अजमेर २०. श्री नरेन्द्र कुमार उबाना, अजमेर २१. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, अजमेर २२. श्री मुमुक्षु मुनि, अजमेर २३. श्री रोशन लाल शर्मा, अजमेर २४. श्री राजेश त्यागी, अजमेर २५. श्रीमती विनीता चौहान, चूरु २६. श्रीमती मैना देवी चौहान, चूरु २७. श्री गंगेश्वर पात्रा, रेवाड़ी २८. आर्यसमाज, पंचकुला २९. श्रीमती तरुणा गहलोत, अजमेर ३०. श्री अनुज मिश्रा, अजमेर ३१. श्री महेन्द्र कुमार, अम्बेडकर नगर ३२. श्रीमती अनुपमा शर्मा, अजमेर ३३. श्रीमती रूपा कुमारी राना, जम्मू-कश्मीर ३४. श्री भूमेश कुमार गौड़, नई दिल्ली ३५. श्रीमती गायत्री शर्मा, जयपुर ३६. श्रीमती सरोज शर्मा, अजमेर ३७. श्रीमती रश्मि शर्मा, उदयपुर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है। **- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१**

ऋषि – मेला

– प्रभाकर आर्य

गतांक से आगे.......

प्रिय पाठको! परोपकारिणी सभा द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करने व उनके कार्यों को और अधिक गति प्रदान करने के लिये आयोजित ऋषि-मेले की भव्यता को पिछले अंक में आप पढ़ चुके हैं। तीन दिवसीय इस कार्यक्रम के प्रथम दिन कई विषयों पर विद्वानों ने अपने-अपने समाधान प्रस्तुत किये।

दूसरे दिन ५ नवम्बर को सत्र का आरम्भ एक विशेष आयोजन के साथ हुआ। महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनन्य अनुयाई एवं आर्षगुरुकुल परम्परा के पुनरुद्वारक स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन पर आधारित पुस्तक ''असली महात्मा'' का विमोचन किया गया। यह पुस्तक मूलरूप से तेलुगु भाषा में लिखी गई है। लेखक हैं आन्ध्रभूमि समाचार-पत्र के सम्पादक श्री एम.वी.आर. शास्त्री। तेलुगु से हिन्दी में अनुवाद किया है-श्री जे.एल.रेड्डी ने। अनुवाद साहित्यिक व एतिहासिक दोनों ही दृष्टि से प्रशंसनीय है। इस पुस्तक में स्वामी श्रद्धानन्द जी के समकालीन राजनेता महात्मा गाँधी की नीतियों का स्वामी जी के साथ तुलनात्मक अध्ययन करके यह बताने का प्रयास किया है कि यदि महात्मा की उपाधि के योग्य कोई था तो वो श्रद्धानन्द जी थे।

पुस्तक विमोचन के समय आर्यजगत् के प्रसिद्ध इतिहासविद् प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, सज्जन सिंह कोठारी (लोकायुक्त-राजस्थान) आदि भी उपस्थित थे। यज्ञोपरान्त हुए इस आयोजन के साथ ही श्री सज्जनसिंह कोठारी जी को परोपकारिणी सभा की ओर से 'न्याय रत्न' की उपाधि से सम्मानित किया गया।

प्रथम सत्र का प्रारम्भ भारत की शिक्षा-नीति के विषय को अधिकृत करके किया गया। इस सत्र में आचार्य नयनकुमार, आचार्या सूर्यादेवी, ठाकुर विक्रम सिंह आदि विद्वानों व सामाजिक कार्यकत्ताओं के विचार श्रोताओं ने सुने। साथ ही सरस्वती भवन में चल रही वेदगोष्ठी में हैदराबाद से प्रोफेसर बाबूराव म्हेत्रे जी ने वैदिक विषयों को प्रोजैक्टर के माध्यम से प्रस्तुत किया। इस सत्र में विद्वदुपदेशों के साथ ही गुरुकुलों के आचार्यों, ब्रह्मचारियों व कार्यकत्ताओं का सम्मान भी किया गया। सम्मानित विद्वज्जन-आचार्य ओमप्रकाश जी-आबू, प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी, ब्र. वरुण देव जी, ब्र. रूपेश जी (ऋषि उद्यान)।

मध्याह्न भोजनोपरान्त की चर्चा का विषय था-महर्षि दयानन्द की वर्तमान में प्रासंगिकता। जैसे-जैसे विज्ञान नई ऊँचाइयों को छू रहा है, वैसे-वैसे मनुष्य जीवन जीने के पुराने सिद्धान्तों व नियमों को धत्ता बताकर उच्छृंखल होता जा रहा है। महर्षि दयानन्द ने विज्ञान को स्वीकार्यता देते हुए उसे साधन रूप में उपयोग करने का विचार दिया। वर्तमान में तकनीक भले ही हमारे जीवन का अभिन्न अंग हो गई हो, फिर भी वह है तो साधन ही। वह हमारी शान्ति का विकल्प कभी नहीं हो सकती। ऋषि के इन विचारों को और अधिक प्रचारित करने के लिये ये सम्मेलन रखा गया। इस सत्र का संयोजन परोपकारिणी सभा के संयुक्त मन्त्री एवं परोपकारी पत्रिका के सम्पादक डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा ने कुशलतापूर्वक किया। सत्र में डॉ. भीमसिंह, श्री मनोज आर्य एवं वेद कण्ठस्थ करने वाले वेदपाठियों को सम्मानित किया गया।

सायंकाल राजस्थान आर्यवीरदल एवं वीरांगना दल के द्वारा व्यायाम प्रदर्शन किया गया। आर्यवीरों एवं वीरांगनाओं ने आसन, प्राणायाम, रस्सा, मलखम्भ, लाठी, भाला, जिमनास्टिक अादि विद्याओं का प्रदर्शन करके सबको आश्चर्यचकित कर दिया। प्रदर्शन का कार्यक्रम आर्यवीर दल अजमेर के जिला संचालक श्री विश्वास पारीक के संचालकत्व में हुआ।

रात्रिकाल का सत्र परोपकारिणी सभा के यशस्वी प्रधान रहे आचार्य धर्मवीर जी को समर्पित रहा। इस कृतज्ञता सम्मेलन का विवरण आप परोपकारी के दिसम्बर प्रथम अंक में पढ़ चुके हैं। सम्मेलन से पहले प्रभाकर आर्य एवं ब्र. रणजीत जी को सम्मानित किया गया।

६ नवम्बर को प्रात:काल प्रतिदिन की भाँति

ऋग्वेदपारायण यज्ञ प्रारम्भ हुआ। ऋषि मेले के अन्तिम दिन वेदपारायण यज्ञ की पूर्णाहुति की गई। पूर्णाहुति के उपरान्त यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य सत्यानन्द वेदवगीश जी का वेद प्रवचन हुआ।

प्रात:कालीन सत्र में आर्ययुवकों की आर्यसमाज में सहभागिता के लिये ''आर्य युवक सम्मेलन'' रखा गया। प्रचार के क्षेत्र में, गुरुकुल के क्षेत्र में, उपदेशकों एवं कार्यकर्त्ताओं के रूप में अपना समय व सेवा देने वाले विद्वानों के अनुभव एवं विचार इस सत्र में श्रोताओं ने सुने। सत्र की अध्यक्षता युवाओं के प्रेरक प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने की। संयोजक आचार्य कर्मवीर एवं व्याख्याता ब्र. नन्दकिशोर, श्री अजय आर्य कुरुक्षेत्र, प्रभाकर आर्य, आ. सर्वमित्र, ब्र. सोमेश, एवं डॉ. मृत्युंजय आदि रहे। प्रारम्भ में आचार्य रामदयाल ने अपने सुमधुर भजनों से श्रोताओं को आनन्दित किया।

अन्तिम सत्र गुरुकुल सम्मेलन के रूप में हुआ। आर्यसमाज एवं समूची मानव जाति के सुख-संवर्धन में गुरुकुल प्रणाली की भूमिका सदैव से ही अहम रही है। परम्परा टूटी तो दु:खों का प्रारम्भ भी हुआ। जब तक मानव निर्माण की कला (गुरुकुल शिक्षा-पद्धति) को राष्ट्र स्वीकार न करेगा, तब तक वह आगे न बढ़ सकेगा। गुरुकुल की अनिवार्यता पर चर्चा करते हुये आचार्य सत्यजित् की अध्यक्षता में यह सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। मुख्य वक्ता रहे आचार्य सत्यानन्द वेदवागीश एवं संचालन किया डॉ. रामचन्द्र ने। इसी सम्मेलन में आचार्य सत्येन्द्र, आचार्य वेदनिष्ठ जी आदि के व्याख्यान भी हुए।

सायंकालीन समापन सत्र में परोपकारिणी सभा के मन्त्री माननीय ओममुनि जी ने पधारे हुये सभी अतिथियों, विद्वानों, कार्यकर्त्ताओं का धन्यवाद करते हुए कार्यक्रम के समापन की घोषणा की, उसके बाद उपस्थित श्रोताओं ने पं. भानुप्रकाश व पं. कुँवर भूपेन्द्र सिंह व सहयोगी श्री लेखराज जी के भजन व उपदेशों का लाभ लिया।

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित गुरुकुल ऋषि उद्यान के ब्रह्मचारियों व आचार्यों ने इस आयोजन को सफल बनाने में महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया। सभी सदस्यों, कार्यकर्त्ताओं, आचार्यों व आर्यजनों के सम्मिलित पुरुषार्थ से ही यह आयोजन प्रतिवर्ष अधिकाधिक उन्नति कर रहा है। इस पूरे आयोजन की दिनचर्या गुरुकुल की तरह थी। प्रात:काल ४ बजे जागरण, फिर ५ बजे से आसन, व्यायाम, की कक्षा द्वारा स्वास्थ्य-रक्षा हेतु आचार्य कर्मवीर जी ने बड़ी ही दक्षता से उपस्थित श्रोताओं को स्वास्थ्य लाभ कराया। उसके पश्चात् स्नान, यज्ञ, उपदेश आदि से पूरा ही वातावरण गुरुकुलमय था।

ऋषि दयानन्द के कार्यों को सतत् आगे बढ़ाने के लिये, इस वाटिका को सींचने के लिये ऋषि की उत्तराधिकारिणी सभा के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर प्रत्येक आर्य इस आयोजन का एक स्तम्भ बना। ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों से हमारी समस्याओं का वैदिक-समाधान हमें निरन्तर मिलता रहे, इसके लिये ये आयोजन सदैव चलते रहें। इसी इच्छा, आशा, अपेक्षा के साथ........धन्यवाद!

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित व उपलब्ध नये संस्करण

१. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार (२ भाग में)

मूल्य - रु. ८००/- पृष्ठ संख्या - प्रथम व द्वितीय भाग-६९६+६९६

महर्षि दयानन्द का महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहार

मूल्य - रु. ४००/- पृष्ठ संख्या - ६१६

ऐतिहासिक महत्त्व का ग्रन्थ है। इस संस्करण की यह विशेषता है कि पत्र और उसका उत्तर साथ-साथ दिये गए हैं। आर्य जाति और आर्यावर्त्त के उत्थान की महती आकांक्षा ऋषिवर के पत्रों में स्पष्ट झलकती है। माननीय डॉ. वेदपाल जी द्वारा सम्पादित यह ग्रन्थ पठनीय एवं संग्रहणीय है। साज-सज्जा और मुद्रण भी उत्तम है। समाप्त होने से पहले- पहले क्रय कर लेवें तो अच्छा रहेगा।

२. 'नवयुग की आहट',महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरितः

मूल्य - रु. ६०/- पृष्ठ संख्या- १९२

१०० से अधिक उपशीर्षकों एवं १३ अध्यायों में लिखा गया ऋषि का यह अनुपम जीवन चरित है। लेखक हैं- ऋषि मिशन के दीवाने, आर्यजाति के प्रहरी, दिल जले आर्य साहित्यकार प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु। पुस्तक में आप जान पायेंगे कि ऋषि का पाखण्ड-खण्डन, सामाजिक दोषों के निराकरण, स्त्री-शिक्षा, अछूतोद्धार, वेदोद्धार, सामाजिक पुनर्जागरण, राष्ट्र-उद्धार के क्षेत्र में क्या योगदान है तथा उनके समकालीन और परवर्ती महापुरुष उनके विषय में क्या कहते हैं।

३. इतिहास की साक्षीः लेखक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

मूल्य - रु. ५०/- पृष्ठ संख्या - ९६

९६ पृष्ठों की इस पुस्तक में विद्वान् लेखक ने महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी के सम्बन्ध में तथ्यात्मक जानकारी दी है। श्रद्धाराम फिल्लौरी के हाथ के लिखे पत्र की एवं अन्य ऐतिहासिक दस्तावेजों की फोटो कापियाँ इसमें दी हैं, जो अन्यथा दुर्लभ हैं।

४. असली महात्मा (हिन्दी)

मूल्य - रु. २००/- पृष्ठ संख्या - २४७

यह पुस्तक मूलरूप से तेलुगु में लिखी गई है। लेखक श्री एम.वी.आर. शास्त्री ने जिस शोधपूर्ण ढंग से और जिस सरसता से इस पुस्तक को लिखा है, उससे दस्तावेजों में रुचि रखने वालों और उपन्यास में रुचि रखने वालों के लिये भी यह एक अतुलनीय ग्रन्थ है। हिन्दी में अनुवाद करते समय श्री जे.एल. रेड्डी ने लेखक के मूल भावों को जिस दक्षता से संजोया है, उससे हिन्दी पाठकों को ये ऐतिहासिक दृष्टि वाला ग्रन्थ किसी उपन्यास से कम नहीं लगेगा।

५. जिज्ञासा-विमर्श लेखक-आचार्य सोमदेव

मूल्य - रु. १००/- पृष्ठ संख्या - २५८

आध्यात्मिक क्षेत्र में सूक्ष्म दार्शनिक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में उठने वाले प्रश्नों का शास्त्रीय एवं तर्क-सम्मत समाधान इस ग्रन्थ में किया गया है। आत्मा, परमात्मा, मोक्ष आदि विषयों से सम्बन्धित प्रश्न बहुत जटिल होते हैं। विद्वान् लेखक ने अपने विस्तृत स्वाध्याय एवं ऊहा के बल पर ऐसे सभी प्रकरणों में सम्यक् समाधान प्रस्तुत किया है। पुस्तक पठनीय एवं संग्रहणीय है। कालान्तर में सन्दर्भ हेतु काम आने वाला ग्रन्थ सिद्ध होगी, क्योंकि अधिकांश समाधान महर्षि कृत ग्रन्थों, वेदों एवं वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थों के आधार पर किये गए हैं। वैदिक सिद्धान्तों की पुष्टि की दृष्टि से भी यह एक उपयोगी पुस्तक है।

वामनावतार की कल्पना

- शिवपूजन सिंह कुशवाहा

दयानन्द वैदिक शोध संस्थान से प्रकाशित 'वामनावतार की कल्पना' नामक पुस्तिका परोपकारी के पाठकों के समक्ष लेख रूप में प्रस्तुत है। यह 'इदं विष्णुर्विचक्रमे.' ऋ. १-२२-१७ की ऋचा के सदाशय को न समझकर विविध पौराणिक भाष्यकारों ने जो तर्कासंगत व प्रकरणाननुमोदित 'वामनावतार' की मिथ्या कल्पना की है, उसका युक्ति-युक्त व प्रमाणान्वित खण्डन है। वेद-मन्त्रों से अवतारवाद को सिद्ध करने की पौराणिक बुद्धि को जानने हेतु यह शास्त्रीय लेख उपयोगी होगा। **-सम्पादक**

वैदिक-युग में अवतार की कोई कल्पना न थी, पर पौराणिक-युग में अवतार की कल्पना की गई और मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, कृष्ण, राम प्रभृति अवतार वेद से सिद्ध किये जाने लगे।

अवतार का अर्थ उतरना है। यह 'अव' पूर्वक 'तृ' धातु से बनता है, जिसका अर्थ उतरना होता है। यह प्रयोग सर्वव्यापक में नहीं घट सकता है। यदि परमात्मा कहीं ऊपर बैठा हो तो अवश्य उसका अवतार कहना उचित कहा जा सकता है, परन्तु सर्वव्यापक में इसका प्रयोग ही अविद्या और अज्ञान है। वेदक्रान्तदर्शी महर्षि दयानन्द जी महाराज ने स्पष्ट लिखा है-

प्रश्न-ईश्वर अवतार लेता है वा नहीं?

उत्तर-नहीं, क्योंकि 'अज एकपाद्' (३४-५३) ''स पर्य्यगाच्छुक्रमकायम्'' (४०-८) ये यजुर्वेद के वचन हैं, इत्यादि वचनों से सिद्ध है कि (परमेश्वर जन्म नहीं लेता) अतएव अवतार की कल्पना निर्मूल है, फिर भी पौराणिक वर्ग निम्नांकित वेद -मन्त्र से वामनावतार सिद्ध करने का प्रयास करते हैं।

''**इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपांसुरे स्वाहा**'' (ऋग्वेदमण्डल १, सूक्त २२, मन्त्र १७। यजु. अ. ५ मन्त्र १५, सामवेद पूर्वार्चिक: ९) (२२२)

पं. रामगोविन्द त्रिवेदी 'वेदान्त शास्त्री' सम्पादक 'गंगा' पत्रिका तथा पण्डित गौरीनाथ जी झा 'व्याकरण तीर्थ' अपनी ऋग्वेदसंहिता, सरल हिन्दी टीका सहित, प्रथम अष्टक, प्रथम संस्करण पृष्ठ २८-२९ की पाद टिप्पणी में लिखते हैं-

''१७ वें मन्त्र के सम्बन्ध में भी बड़ा मतद्वैध है। रमानाथ सरस्वती ने लिखा है कि मध्य एशिया से भारतवर्ष आते समय आर्यों के अग्रगन्ता विष्णु नामक आर्यपुरुष थे। उन्होंने रास्ते में तीन स्थानों पर विश्राम किया था और उनकी तथा अनुगामियों की पद-धूलि से संसार आवृत हो चला था।'' इस अर्थ का रेवरेण्ड कृष्णमोहन बनर्जी ने अपने Aryan Wirness में जोरों से अनुमोदन किया है। इनके मत के ही अधिकांश पाश्चात्य लेखक अनुमोदक हैं, परन्तु आर्य-साहित्य इनकी कल्पना का अनुमोदन नहीं करता। युक्ति भी इसका साथ नहीं देती।

शाकपूणि आचार्य का मत है कि विष्णु ने पृथिवी, अन्तरिक्ष और आकाश में तीन प्रकार से पैर रखे थे। ऐतरेय ब्राह्मण (६-१५) में लिखा है कि देवों और असुरों के बीच जब संसार का बंटवारा होने लगा, तब इन्द्र ने कहा कि अपने तीन पैरों से विष्णु जितना नाप सकें, उतना संसार देवों के हिस्से, शेष असुरों के। असुर भी इससे सहमत हो गए और विष्णु ने अपने पाद विक्रम से जगत् के साथ ही वेद और वाक्य को भी व्याप्त कर लिया।

शतपथ ब्राह्मण (१-२-५) में उल्लेख है कि, ''असुरों ने कहा कि वामनरूप विष्णु के शयन करने पर जितना स्थान आवृत होगा, उतना देवों का, शेष असुरों का। इस प्रस्ताव का देवों ने समर्थन किया और विष्णु ने सारे संसार को आवृत कर उसे देवों को दिलवा दिया।'' इस तरह अनेक प्रमाण हैं। जिनसे रमानाथ सरस्वती आदि की कल्पना खण्डित होती है।

मध्य एशिया से भारतवर्ष आने में विष्णु ने तीन ही स्थानों पर विश्राम किया? क्या इतनी लम्बी यात्रा में तीन ही पड़ाव संभव हैं? क्या विष्णु और उनके चन्द आर्य-अनुगामियों की पद-धूली से संसार का छिप जाना संभव

है? इन सब प्रश्नों का कोई भी उत्तर नहीं है। सत्य तो यह है कि विष्णु नामक रक्षक भगवान् के तीन पैरों से समस्त जगत् का व्याप्त होना, विष्णु द्वारा संसार की रक्षा होना और विष्णु के वामनावतार की मूल कथा स्पष्ट ही वैदिक-मन्त्रों में है। उनके अर्थों की खींचातानी करना समय नष्ट करना है।

आप लोगों ने स्वयं इस मन्त्र की टीका की है- वामनावतारधारी विष्णु ने इस जगत् की परिक्रमा की थी, उन्होंने तीन प्रकार से अपने पैर रखे थे और उन धूलीयुक्त पैर से जगत छिप-सा गया था।

विद्या वारिधि पं. ज्वाला प्रसाद मिश्र लिखते हैं-'अब वामनावतार की सुनिए, सामवेदे छन्द आर्चिके।'

''इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढ़मस्यापाᳫंसुरे।'' २ प्र. १-१-९

(विष्णु) त्रिविक्रमावतारधारी (इदम्) प्रतीयमानं सर्वं जगदुद्दिश्य (विचक्रमे) विभज्य क्रमतेस्म (त्रेधा) त्रिभि: प्रकारै: (पदं निदधे) स्वकीयं पादप्रक्षिप्तवान् (अस्य) (विष्णो:) पांसुले पांसुरे वा धूलियुक्तकेपादस्थाने (समूढ़म्) इदं जगत् सम्यगन्तर्भूतम् (सेयमृग् यास्केनैव व्याख्याता विष्णुर्विशतेर्वाप्रोतेर्वा) शतपथ में भी वामनावतार का वर्णन है।

यथा ''वामनोह विष्णुरास'' (श. १-२-२-५)

वामन साक्षात् विष्णु ही थे। यहाँ वामन अवतार की पूरी कथा लिखी है।

भाषार्थ-अमरेश त्रिविक्रमावतारी वामन जी इस विश्व को उल्लंघन करते हैं, तीन पग धरते हैं। एक भूमि, दूसरा अन्तरिक्ष, तीसरा स्वर्ग में। इनके चरण में चतुर्दश ब्रह्मांड सम्यक् अन्तरभूत होता है।

पं. कालूराम शास्त्री लिखते हैं-

विष्णु ने इस दृश्यमान ब्रह्माण्ड को नापा और तीन प्रकार से पग रखा, इस के पद में समस्त संसार स्थित है।

इसकी पुष्टि में कठोपनिषद् लिखता है कि-''मध्ये वामनमासीनं विश्वेदेवा उपासते''। (कठ. वल्ली. ५ श्रु. ३)

मध्य में बैठे हुए वामन की विश्वेदेव उपासना करते हैं। इसकी पुष्टि में शतपथ लिखता है कि-

'वामनोह विष्णुरास।' शत. १-२-२-५

विष्णु ही वामन थे।

पं. माधवाचार्य शास्त्री, 'हिन्दी प्रभाकर' वेदवाचस्पति महामहोपदेशक लिखते हैं-

''....वामनावतारधारी विष्णु ने इस जगत् को तीन चरणों से आक्रान्त कर पग धरे हैं और इनके धूलीधूसर पद में यह भूमि आदि समस्त लोक अन्तर्हित हो गए।'' ()

पं. ब्रह्मदेव शास्त्री काव्यतीर्थ, सम्पादक ''ब्राह्मण सर्वस्व'' इटावा लिखते हैं।

वामनावतार का वर्णन भी वेद में बहुत स्पष्ट-रीत्या पाया जाता है। यजुर्वेद अध्याय ५ का पांचवां मन्त्र है।

इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढ़मस्यपाᳫंसुरे स्वाहा।

अर्थ-(विष्णु:) ब्रह्म (इदम्) इस जगत् का (विचक्रमे) पैर से नापता भया (पदम्) पैर के (त्रेधा) तीन प्रकार से (निदधे) रखा। (अस्य) इसका (पांसुरे) धूलीयुक्त स्थान में पैर (समूढ़म्) सम्यक् प्रकार से अन्तर्हित हुआ।

प्रसिद्ध वेद-भाष्यकार महीधर ने इस मन्त्र का भाष्य भी अवतारपरक ही किया है। वे लिखते हैं-

'विष्णु: त्रिविक्रमावतारं कृत्वा इदंविश्वंविचक्रमे विभज्य क्रमतेस्म। तदेवाह। त्रेधा पदं निदधे भूमावेकं पदमन्तरिक्षे द्वितीयं दिवि तृतीयमिति क्रमादग्निवायुसूर्यरूपेणेत्यर्थ:। पांसवो भूम्यादिलोकरूपा विद्यन्ते यस्य तत्पांसुरमस्मिन् पांसुरे, अस्य विष्णो: पदं सम्यगन्तर्भूतम् विश्वमितिशेष:। यद्वायमर्थ: यस्य विष्णो:पदं पद्यते त्रायत इति पदमद्वैताख्यं स्वरूपं समूढ़मन्तर्हितमज्ञातमकृतात्मभि:। कस्मिन्निव। पांसुरे इव लुप्तोपमान पांसुरे रजस्वले प्रदेशे हितं यथा न ज्ञायते तद्वत् तदुक्तं (अध्याय.) ६-५ क., तद्विष्णो: परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरय इति। स्वाहा तस्मै विष्णवे हविर्दत्तम्।। १५।।'

इस भाष्य का अर्थ करने की जरूरत नहीं। क्योंकि ऊपर जो अर्थ दिया गया है वह भी महीधर भाष्य के अनुकूल ही है। अब देखिये निरुक्तकार क्या कहते हैं। निरुक्त ही वेदार्थ की प्रक्रिया बताता है। इसीलिये निरूक्त को वेदांग माना है। आर्यसमाजी भी निरुक्त को मानते हैं। देखिये वह निरुक्तकार इस मन्त्र पर क्या लिखते हैं-

''यदिदं किञ्चतद्विक्रमते विष्णुस्त्रेधा भावाय

पृथिव्यामन्तरिक्षे दिवीति शाकपूणिः। समारोहणे विष्णुपदे गयशिरसीत्यौर्णनाभः। समूढ़हमस्यपांसुरेप्यायनेऽन्तरिक्षे पदे न दृश्यते। अपिबोपार्थे स्यात् समूढ़मस्य पांसुल इव पदं न दृश्यत इति। पांसवः पादैः सूयन्त इति वा पन्ना, शेरते इति वा पिंशनीया भवन्तीति वा।''

(यत्) जो (किञ्च) कुछ (इदम्) यह है (तत्) उसको (विष्णुः) व्यापक ईश्वर (विचक्रमेते) पैर से नापता भया और (त्रेधा) तीन प्रकार से (पदम्) पैर (निधत्ते) रखा (पृथिव्याम्) पृथिवी में (अन्तरिक्षे) अन्तरिक्ष में (दिवि) द्युलोक में (इति) यह (शाकपूणिः) शाकपूणिः का मत है।

(समारोहणे) समारोहण में (विष्णुपदे) विष्णुपद में (गयशिरसि) गयशिर में (इति) यह (और्णनाभः) और्णनाभ का मत है। (समूढ़स्य) सम्यक् बढ़े हुए ब्रह्म का (पांसुरे) धूली रेत में जैसे (अपि) वैसे ही (आयने) अन्तरिक्ष में (पदम्) पैर (न) न (दृश्यते) दिखलाई दिया। यहाँ पर अपि अव्यय उपमा में है। (समूढ़स्य पांसुल इव पदं न दृश्यते) रेत में जैसे पग दिखलाई नहीं देता। वैसे ही दिखाई नहीं देता। वैसे ही न दिखलाई दिया। (पांसवः पादैः सूयन्त इति) पैरों से धूली पैदा होती है, इसी कारण धूली को 'पांसु' कहते हैं।

अब बतलाइये आर्यसमाजी कहाँ जायेंगे? वेद, निरुक्त सभी तो वामनावतार की गवाही दे रहे हैं। अर्थ बदलने से भी काम न चलेगा, पाणिनि जी ने 'क्रमु' धातु को जिन-जिन अर्थों में आत्मनेपद किया है, वहाँ कुछ नियम बना दिये हैं। किस उपसर्ग के होने पर किस अर्थ में 'क्रमु' धातु से आत्मनेपद होगा। इसका नियम है (वेः पााद विहरणे) यह सूत्र है। इसमें नियम कर दिया है कि 'वि' उपसर्ग उपपद हो तो 'क्रमु' धातु से तभी आत्मनेपद होगा, जब 'उठा-उठा कर रखता' अभिप्रेत हो। वामनावतार में भगवान् ने पैर उठा-उठा कर रखे थे, इससे और कुछ भी अर्थ नहीं किया जा सकता। इस वामनावतार को उपनिषद् भी कहता है-

मध्येवामनमासीनं विश्वेदेवा उपासते। (कठ. उप. वल्ली. ५ मन्त्र ३)

अर्थ-(मध्ये) मध्य में (आसीनं) बैठे हुए (वामनम्) वामन को (विश्वेदेवाः) विश्वेदेव (उपासते) उपासना करते थे।

शतपथ भी वामन अवतार को लिखता है-'वामननोह विष्णुरास' (शत. १-२-२-५)

अर्थ-वामन साक्षात् विष्णु थे। शतपथ भी साक्षात् वेद है 'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्'।

स्वामी आसाराम सागर संन्यासी धर्मोपदेशक लिखते हैं-

''नमो ह्रस्वायच वामनायच.'' (य. अ. १६ मन्त्र ३०)

इस मन्त्र में ईश्वर के वामनाऽवतार का वर्णन है।

'वामनो हि विष्णुः।' (शत. १ ब्रा. ३ क. ५)

इस प्रमाण से भी विष्णु-परमात्मा का वामनावतार सिद्ध हो चुका है।

समीक्षा-इदं विष्णुर्विचक्रमे. मन्त्र का अर्थ महीधर, सायण, श्री ज्वालाप्रसाद मिश्र, श्री कालूराम जी, श्री ब्रह्मदेव जी प्रभृति वामनावतार परक करते हैं, जिससे साधारण जनता भ्रम में पड़ जाती है कि इस मन्त्र का वास्तविक अर्थ क्या है? यहाँ 'विष्णु' का अर्थ 'वामनावतार' नहीं है, वरन् परमात्मा है। यथा-

'विष्णुः परमात्मा इति' यजु. ४-१७।

''विष्णुः परमात्मा''

- (स्कन्दनिरुक्त टी. भा. २ पृष्ठ ५५)

'विष्णुर्व्यापक इति शत्रुघ्नाचायः'

- (मन्त्रार्थ दीपिका पृष्ठ ७)

विष्णुर्व्यापक इति देवपालः।

विष्णवे=परमेश्वराय (ऋषि दयानन्द यजु. ४-१७ भाष्यम्)

अब (इदं विष्णु)........का अर्थ अपने यजुर्वेद भाष्य में महर्षि दयानन्द जी करते हुए महीधर के सिद्धान्त का खण्डन करते हैं यथा-

(इदम्) प्रत्यक्षाप्रत्यक्षं जगत्। (विष्णुः) यो वेवेष्टि व्याप्नोति चराचरं जगत् स जगदीश्वरः। (विः) विविधार्थे। (चक्रमे) क्रान्तवान् निक्षिप्तवान् क्राम्यति क्रमिष्यति वा। अत्र सामान्येऽर्थे लिट्। (त्रेधा) त्रिप्रकारम्। (नि) नितराम्।

(धधे) हितवान् दधाति धारयति वा। (पदम्) पद्यते गम्यते यत्तत्। अत्र घञर्थे कविधानम्। (अ. ३-३-५८ भा.

वा.) इति क प्रत्ययः। (समूढम्) सम्यगुह्यते ऽनुमीयते शब्द्यते यत्तत्। (अस्य) त्रिविधस्य जगतः। (पांसुरे) पांसवो रेणवो रजांसि रमन्ते यस्मिन्नतरिक्षे तस्मिन्। (स्वाहा) सुहुतं जुहोत्यर्थे। इमं मन्त्रं यास्कमुनिरेव व्याख्यातवान्-यदिदं किंच तद्विक्रमते विष्णुस्त्रिधानिधत्ते पदं त्रेधा भावाय पृथिव्यामन्तरिक्षे दिवीति शाकपूणिः समारोहणे विष्णुपदे गयशिरसीत्यौण नामं समूढ़मस्य पांसुरेप्यायनेऽन्तरिक्षे पदं न दृश्यतेऽपिवोपमार्थे स्यात् समूढ़मस्य पांसुल इव पदं न दृश्यत इति पांसवः पादैः सूयन्त इति वा पन्ना शेरत इति वा पिंशनीया भवन्तीति वा। निरु. १२-१९।। अयंम् मन्त्रः शत. ३-५-३-१३ व्याख्यातः।।१५।।

भावार्थ-परमेश्वरेण यत् प्रथमं प्रकाशवत् सूर्यादि द्वितीयमप्रकाशवत् पृथिव्यादि प्रसिद्धं जगद्रचितमस्ति, यच्चातृतीयं परमाण्वाद्यदृश्यं सर्वमेतत्करणावयवैः रचयित्वाऽन्तरिक्षे स्थापितं, तत्र औषध्यादि पृथिव्याम्, अग्न्यादिकं सूर्ये, परमाण्वादिकमाकाशे निहितं सर्वमेतत् प्राणानां शिरसि स्थापितवानस्ति। साहैषा गयास्तत्र। प्राणा वै गयास्तत्प्राणांस्त्रेतद्यद्गायत्रेतस्माद्गायत्री नाम। (शत. १४-८-१५-६७)। अनेन गय शब्देन प्राणानां ग्रहणम्। अत्र महीधरः प्रभृति त्रिविक्रमावतारं कृत्वेत्यादि तदशुद्धं सज्जनैर्बोध्यम्।।१५।।

पदार्थ-''(विष्णुः) जो सब जगत् में व्यापक जगदीश्वर जो कुछ (इदम्) यह जगत् है उसको (विक्रमे) रचता हुआ इस प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष जगत् को (त्रेधा) तीन प्रकार का (निदधे) धारण करता है। (अस्य) इस प्रकाशवान्, प्रकाशरहित और अदृश्य तीन प्रकार के परमाणु आदि रूप (स्वाहा) अच्छे प्रकार देखने और दिखलाने योग्य जगत् का ग्रहण करता हुआ इस (समूढ़म्) अच्छे प्रकार विचार करके कथन करने योग्य अदृश्य (पदम्) जगत् को (पांसुरे) अन्तरिक्ष में स्थापित करता है, वही सब मनुष्यों को उत्तम रीति से सेवन करने योग्य है।। १५।।''

भावार्थ-''परमेश्वर ने जिस प्रथम प्रकाश वाले सूर्यादि, दूसरा प्रकाशरहित पृथ्वी आदि और जो तीसरा परमाणु आदि अदृश्य जगत् है। उस सब को करण से रचकर अन्तरिक्ष में स्थापन किया है, उनमें से औषधी आदि पृथ्वी में, प्रकाशादि सूर्य लोक में, और परमाणु आदि आकाश और इस जगत् को प्राणों के शिर में स्थापित किया है। इस लिखे हुए शतपथ के प्रमाण से 'गय' शब्द से प्राणों का ग्रहण किया है, इसमें 'महीधर' जो कहता है कि त्रिविक्रम अर्थात् वामनावतार को धारण करके जगत् को रचा है, यह उसका कहना सर्वथा मिथ्या है ।। १५।।''

इस अर्थ की पुष्टि करते हुए पं. तुलसीराम जी स्वामी शास्त्री अपने ग्रन्थ में लिखते हैं-''...**अन्वित पदार्थः**- (विष्णुः) यज्ञः परमेश्वरो वा (इदम्) जगत् (त्रेधा) पृथ्वी अन्तरिक्ष द्यौश्चेति त्रिभिः प्रकारैः (विक्रमे) विक्रमते विक्रान्तवान्वा। तथा (अस्य)जगतः (पाꣳसुले) रजसी प्रतिपरमाणु (समूढ़म्) अन्तर्हितम् (पदम्) स्वरूपं (निदधे) नितरां दध्यात् दधाति वा।''

अनुष्ठीयमानो यज्ञः। परमेश्वरश्च पृथिव्यामन्तरिक्षे दिवि चेति त्रिषु लोकेषु व्याप्नोति। अन्तर्हितमदृश्यं स्वरूपञ्च अस्य जगतः प्रतिपरमाणु निदधाति इति भावः।

यज्ञोवै विष्णुः। अत्र सायणाचार्येण विष्णु शब्देन त्रिविक्रमावतार ग्रहणं निर्मूलमेव कृतम्। परमेश्वरस्याऽकायत्वान्निराकारत्वात्क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टत्वात् न च निरुक्तकारेणाऽपितादृशव्याख्यानस्यकृतत्वात्। यथा- यदिदम्......निरुक्त १२-१९

गयशिरसीत्यत्र गय इत्यपत्यनाम। निघं. २-१०

शेष भाग अगले अंक में............

स्पष्टीकरण

प्रिय पाठकगण! परोपकारी के दिसम्बर-प्रथम अंक में पृष्ठ सं. ८ पर तड़प-झड़प स्तम्भ में ओंकारनाथ जी का पत्र प्रमाण रूप में प्रकाशित किया गया था। इस पत्र को देने का उद्देश्य यह प्रमाणित करना था कि ऋषि दयानन्द जब रावलपिंडी गये तो जिनके घर पर ठहरे, उनका नाम जमशेद था। उस पत्र में यह पंक्ति कि ''आपने महर्षि के रावलपिंडी जाने का सन् १९६८ लिखा है- वह १९७९ है....'' मूल में ही लिखी हुई है। अतः सन् गलत होते हुए भी पूरे पत्र को यथावत् दिया गया, जिससे प्रमाणिकता बनी रहे। पाठकों से निवेदन है कि उस पत्र को 'जमशेद' नाम के प्रमाण के रूप में ही देखें, अन्य रूप में नहीं। धन्यवाद!

- सम्पादक

संस्था - समाचार

१ से १५ दिसम्बर २०१६

यज्ञ एवं प्रवचन- ऋषि उद्यान आर्यजगत् के उन स्थलों में से है, जहाँ पूरे वर्ष प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ का अनुष्ठान अपरिहार्य रूप से किया जाता है। प्रात:काल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा महर्षि दयानन्द कृत वेदभाष्य का स्वाध्याय किया जाता है और तदनन्तर वेद-प्रवचन होता है। रविवार प्रात:काल विशेष यज्ञ किया जाता है, जिसमें नगर निवासी आर्य-सज्जन, माताएँ, बहनें और बच्चे सम्मिलित होते हैं तथा अपनी-अपनी आहुतियाँ प्रदान करते हैं। अतिथि-यज्ञ के होता के रूप में दान देने वाले यजमान यदि ऋषि उद्यान में उपस्थित होते हैं तो उनके जन्मदिवस, वैवाहिक वर्षगाँठ, सम्बन्धियों की पुण्य-तिथि एवं अन्य अवसरों से सम्बन्धित विशेष मन्त्रों से आहुतियाँ भी दिलवायी जाती हैं। सायंकाल प्रतिदिन यज्ञ और सोमवार से शुक्रवार तक 'उपदेश मंजरी' पुस्तक का पाठ एवं चर्चा होती है। शनिवार सायंकाल वानप्रस्थी साधक-साधिकाओं द्वारा प्रवचन होता है। प्रत्येक रविवार को प्रात:काल के प्रवचन में समसामयिक सामाजिक, राष्ट्रीय घटनाक्रमों पर व्याख्यान होता है। रविवार सायंकाल गुरुकुल के ब्रह्मचारियों का भजन, प्रवचन होता है। यहाँ पर व्याकरण, दर्शन, रचना-अनुवाद कौमुदी की कक्षायें निरन्तर चलती रहती हैं, जिनमें गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के साथ-साथ आश्रमवासी संन्यासी, वानप्रस्थी, महिलायें और बाहर से आने वाले जिज्ञासु ज्ञान अर्जित करते रहते हैं। ऋषि उद्यान के प्रांगण में प्रतिदिन प्रात: और सायं आर्यवीर दल की शाखा योग्य शिक्षकों के द्वारा लगायी जाती है, जिसमें आसन, प्राणायाम, जूडो-कराटे, रस्सा, मलखम्भ, जिमनास्टिक आदि विद्याओं को सिखाया जाता है। पूरे वर्ष भर ऋषि उद्यान स्थित महर्षि दयानन्द सरस्वती भवन में दयानन्द चित्र दीर्घा एवं वस्तु प्रदर्शनी को देखने तथा यज्ञ-प्रवचन से लाभ लेने के लिए देश के विभिन्न भागों से स्त्री-पुरुष आते रहते हैं।

प्रात:कालीन यज्ञोपरान्त मुक्ति के विषय में पिछले कुछ दिनों से चर्चा का क्रम निरन्तर चल रहा है। वेदमंत्रों और महर्षि दयानन्द कृत वेदभाष्य एवं अन्य ग्रन्थों, शास्त्रों के प्रमाणों पर चिन्तन, मनन हो रहा है। क्या मुक्ति केवल ब्राह्मण और संन्यासी को ही मिलती है अथवा क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तथा अन्य गृहस्थ, वानप्रस्थ और ब्रह्मचर्य आश्रम वालों की भी मुक्ति हो सकती है? ब्राह्मण और संन्यासी की विशिष्ट योग्यता जैसे ज्ञान, विवेक, वैराग्य, योग का अनुष्ठान आदि जो मुक्ति के लिये आवश्यक है, वह योग्यता क्या दूसरे वर्ण और आश्रम वाले भी प्राप्त कर सकते हैं और उससे उन्हें भी मुक्ति मिल सकती है? गृह त्यागकर, दीक्षा लेकर, गेरुवे वस्त्र धारण कर धर्म प्रचार के लिये भ्रमण करना, एक स्थान पर अधिक समय न ठहरना आदि संन्यास आश्रम के प्रमुख लक्षण है। जो गृह त्याग न करे, दीक्षा लेकर गेरुवे वस्त्र धारण न करे, भ्रमण न करे, किन्तु ज्ञान और वैराग्य की दृष्टि से संन्यासियों जैसा ही हो, क्या वह भी मुक्ति प्राप्त कर सकता है? क्या ब्राह्मण कर्म अर्थात् ईश्वर उपासना, उपदेश, अध्यापन, यज्ञ करवाना आदि कार्य न करते हुए भी स्वाध्याय और सदाचार से ज्ञान तथा वैराग्य की स्थिति में पहुँचकर मुक्ति को प्राप्त कर सकता है?

आचार्य सत्यजित् जी ने कहा कि महर्षि दयानन्द जी के अनुसार जो ब्रह्मचर्य से चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त कर राजा बनता है, वह ईश्वर की आज्ञानुसार विद्या का प्रचार तथा प्रजा के साथ पक्षपातरहित पूर्णरूप से न्याय का ही आचरण करनेवाला होता है। वह अनपराधी प्राणियों को नहीं मारता है। वह राजा इस जन्म में गृहस्थ आदि सब सुखों को प्राप्त करता है और देहत्याग के पश्चात् मोक्ष को प्राप्त होता है।

इस विषय में **उपाचार्य सत्येन्द्र जी** ने कठोपनिषद् का उद्धरण देते हुए कहा कि जो मनुष्य दुराचार से अलग नहीं, जिसने अपने मन को शान्त और एकाग्र नहीं किया, वह संन्यास लेकर भी ज्ञान-विज्ञान को प्राप्त नहीं होता। विधिपूर्वक संन्यास लेकर भी जो अपना आचरण नहीं सुधारता वह मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता। मुक्ति के लिये वेश-भूषा नहीं, किन्तु आचरण मुख्य है। विधि की अपेक्षा योग्यता प्रमुख है। संन्यास में गृह-त्याग की अपेक्षा विवेक, वैराग्य होना मुख्य है।

स्वामी मुक्तानन्द जी ने कहा कि राजा और गृहस्थ उसी जन्म में मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकते, क्योंकि वे ऐषणाओं से युक्त होते हैं। यदि कोई ऐषणा न हो तो गृहस्थ करने की क्या आवश्यकता है? जब तक गृहस्थ में रहता है तब तक राग से अलग नही हो सकता, इसलिये मुक्ति को भी प्राप्त नहीं कर सकता। इस प्रकार सिद्ध है कि संन्यासी ही मुक्ति को प्राप्त कर सकता है। सभी वर्ण और आश्रम वाले मोक्ष की इच्छा करते हैं, किन्तु संन्यासी के समान पक्षपातरहित निष्काम कर्म, ज्ञान-विज्ञान की प्राप्ति और ईश्वर की उपासना नहीं कर सकते,

इसलिये अन्य लोग उसी जन्म में मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते।

ब्र. देवेन्द्र जी ने कहा कि मोक्ष-प्राप्ति के लिये किसी वर्ण या आश्रम विशेष का ग्रहण करना आवश्यक नहीं है। जो अपने-अपने वर्ण और आश्रम के कर्तव्यों का धर्मपूर्वक पूर्णरूप से पालन करते हैं वे भी मुक्ति को प्राप्त कर सकते हैं। परमपिता परमात्मा न्यायकारी है, जो भी मुक्ति के योग्य होगा, उसे मुक्ति अवश्य देगा।

महर्षि दयानन्दकृत वेदभाष्य और मनुस्मृति आदि शास्त्रों के आधार पर **ब्र. सत्यव्रत जी** ने कहा कि जो संन्यास नहीं लेते वे गृहस्थ में रहकर भी मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। जो अक्षय मोक्ष और संसार के सुख की इच्छा करता हो वह प्रयत्न से गृहस्थ आश्रम का धारण करे, जो गृह आश्रम दुर्बल इन्द्रिय अर्थात् भीरु और निर्बल पुरुषों से धारण करने के अयोग्य है।

ब्र. दिलीप जी ने कहा कि जो संन्यास आश्रम में नहीं जाता, वह भी मुक्ति को प्राप्त कर सकता है। छान्दोग्योपनिषद् का प्रमाण उद्धृत करते हुए बताया कि आचार्य के कुल से वेद को पढ़ करके, यथाविधान गुरु को दक्षिणा आदि देकर, समावर्तन संस्कार करके, अपने कुटुम्ब में पवित्र स्थान पर, स्वाध्याय करते हुए, अपने धार्मिक कर्मों को करते हुए, आत्मा में सभी इन्द्रियों को सम्प्रतिष्ठित करके शास्त्रोक्त हिंसा के अतिरिक्त सब प्राणियों के प्रति अहिंसा का व्यवहार करते हुए वह इस लोक में सुख प्राप्त करता है और मोक्ष को प्राप्त करता है। उसका अगला जन्म नहीं होता है।

श्री प्रभाकर जी ने कहा कि रूढ़ि मानवीय चिन्तन का विषय है। ईश्वरीय व्यवस्था के अनुसार जो मुक्ति के योग्य होगा, उसी की मुक्ति होगी। ईश्वर अन्तर्यामी है। वह सभी मनुष्यों के गुण, कर्म, स्वभाव को भीतर से ही जानता है। बाहरी वेशभूषा समाज की व्यवस्था को बनाये रखने के लिये है। मुक्ति का वेश-भूषा से कोई सम्बन्ध नहीं है। सृष्टि के आदि में जो चार ऋषि ईश्वर से वेदज्ञान प्राप्त करते हैं, उन्हें ब्राह्मण व संन्यास की दीक्षा नहीं मिलती है, तो क्या वे चाहकर भी, वेदवित् होकर भी मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकते हैं?

ब्र. शक्तिनन्दन जी, ब्र. कोटेश्वर जी, ब्र. रमण जी ने कहा कि बिना संन्यास आश्रम ग्रहण किये भी मुक्ति हो सकती है। धर्मात्मा विद्वान् लोग गृहस्थ में रहकर भी मुक्ति को प्राप्त हो सकते हैं, संन्यास लेना अनिवार्य नहीं है। वेदोक्त धर्म का पालन करते हुए क्षत्रिय और वैश्य भी मुक्ति पर्यन्त पदार्थों को प्राप्त हो सकते हैं।

देहरादून से पधारे **स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी** ने कहा कि मुक्ति के लिये संन्यास लेना आवश्यक नहीं है। ईश्वर को प्राप्त करने का अधिकार सबको है। नियमों का पालन करते हुए जिनका पूर्व जन्म का संस्कार है, थोड़ा और प्रयास करके मुक्त हो जायेगा। उसे इन सब प्रक्रियाओं से गुजरना जरुरी नहीं। हमने सुना है, पढ़ा है कि राजा जनक गृहस्थ में ही थे, परन्तु ऊँचे वैराग्य की स्थिति को प्राप्त कर चुके थे।

इस विषय पर दोनों ही पक्षों ने वेदभाष्य, सत्यार्थप्रकाश, संस्कारविधि, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, योगदर्शन, मीमांसादर्शन, उपनिषद्, शुक्रनीति, विदुरनीति आदि ग्रंथों के प्रमाण प्रस्तुत किये।

शनिवार सायंकालीन प्रवचन के क्रम में **श्री राजेश जी** ने कहा कि ईश्वर अक्षय सुख का भंडार है, जो भी मनुष्य अक्षय सुख चाहता है, उसे ईश्वर की उपासना करनी ही पड़ेगी। संसार में पूर्ण सुख देने वाला, तृप्त करने वाला कोई भी पदार्थ नहीं है। ठंड से पीड़ित मनुष्य को अग्नि के समीप बैठना ही पड़ता है। **माता कंचन जी** ने कहा कि मनुष्य योनि उभययोनि है अर्थात् पिछले जन्म के कर्मों के फलस्वरूप सुख-दुख का भोग करना और नये कर्म करके अपने स्तर को ऊँचा उठाना। मनुष्यों के लिये पूर्ण अवसर उपलब्ध होता है जिससे वे अपने जीवन में स्वतन्त्र रूप से बौद्धिक और आत्मिक विकास कर सकते हैं, इसलिये वह अन्य सब प्राणियों से श्रेष्ठ है।

सायंकालीन प्रवचन में **स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी** ने कहा कि हम सब का सौभाग्य है जो इस पवित्र देश में जन्म लिये जहाँ वेद का पठन-पाठन, योग और यज्ञ होता है। हमारा शरीर क्षर और अक्षर का समुच्चय है। क्षर है शरीर और अक्षर है आत्मा। इस संसार का नियामक और निमित्त कारण परमात्मा है। वही कारण और कार्यरूप प्रकृति को संभालता है। हम सब जीवों का नियमन भी वही करता है। वह सब जड़ चेतन का स्वामी है। आत्मा अजर, अमर, नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त है इसलिये निर्भीक रहना चाहिये। अपने आपको जब हम ईश्वर के साथ जोड़ लेते हैं, तब हमें ज्ञान, बल, ऐश्वर्य, पराक्रम, स्वतन्त्रता, निर्भीकता और आनन्द प्राप्त होता है। सुख की पराकाष्ठा ही ईश्वर का आनन्द है। अपनी पूरी शक्ति से उसे हमें प्राप्त करना है।

रविवारीय प्रातःकालीन सत्संग में **श्री सोमेश जी** ने पं. मोतीलाल जी 'दीपक' रचित भजन सुनाया- 'थाम ले पतवार प्रभु कोई न हमारा है......'

रविवारीय सायंकालीन प्रवचन के क्रम में **ब्र. वेदपाल जी** ने कहा कि संसार में दो प्रकार के मनुष्य मिलते हैं। एक वे हैं जो अपने-अपने क्षेत्र में बहुत ऊँचाईयों को प्राप्त होते हैं, दूसरे वे

जो सामान्य जीवन जीते हैं। जो लोग मन, वाणी, शरीर और अर्थ से विद्याग्रहण के काल में आलस्य छोड़कर अच्छे प्रकार पुरुषार्थ करते हुए अवसरों का लाभ उठाते हैं, वे जीवन में विशेष उन्नति करते हैं। वे आनन्द प्राप्त करते हैं तथा अन्य लोगों से बहुत आगे निकल जाते हैं। जो समय रहते पुरुषार्थ नहीं कर पाते हैं, इधर-उधर व्यर्थ के कार्यों में अपना समय गँवाते हैं वे सामान्य जीवन जीते हैं। स्वयं को स्वस्थ रखने और जीवन को गतिमान् बनाये रखने के लिये पुरुषार्थ करते रहना आवश्यक है।

*** आचार्य सोमदेव जी का प्रचार कार्यक्रमः-**

सम्पन्न कार्यक्रमः-

(क) ०६-१२ दिसम्बर २०१६**:** मुंडिया टोंक में पारायण-यज्ञ व सत्संग।

(ख) १५-१८ दिसम्बर २०१६**:** आर्यसमाज अशोक नगर, दिल्ली का वार्षिकोत्सव।

(ग) १९-२५ दिसम्बर २०१६**:** गुड़गांव में वेद-प्रचार कार्यक्रम।

(घ) २६-२९ दिसम्बर २०१६**:** आर्यसमाज डबरा, ग्वालियर का वार्षिकोत्सव।

आगामी कार्यक्रमः-

(क) ०१ जनवरी २०१७**:** आर्यसमाज बोरोली, रेवाड़ी, हरियाणा।

(ख) ६-८ जनवरी २०१७**:** आर्यसमाज इंदिरा नगर, बैंगलोर, कर्नाटक।

परोपकारिणी सभा का एक और प्रकल्प

इटारसी से १३ कि.मी. की दूरी पर जमानि ग्राम के पास परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा संचालित आश्रम है। आश्रम की भूमि १० एकड़ में है। यह भूमि ब्र. नन्दकिशोर जी द्वारा सभा को समर्पित है। यहाँ दो वर्षों से यज्ञादि का कार्यक्रम जनवरी माह में होता रहा है। भूमि उपजाऊ है। इसकी देखरेख में आचार्य सत्यप्रिय जी ने अपना पूर्ण योगदान देकर आवासीय किया है। एक लघु गौशाला भी स्थापित की है। प्रतिदिन ग्राम में किसी न किसी के घर पर यज्ञ होता है। यह जागृति है।

इस वर्ष विश्वकल्याण महायज्ञ के रूप में पाँच दिवसीय यजुर्वेद पारायण यज्ञ २०० किलो घी की आहूति से सम्पन्न करने का संकल्प लिया गया। इस संकल्प को आचार्य सोमदेव जी ऋषि उद्यान द्वारा लिया गया एवं स्वयं मुख्य यज्ञमान बने। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य प्रभामित्र थे। इनके सानिध्य में यज्ञ पाँचो दिन प्रातः सायं दोनों समय यज्ञ की आहुतियाँ चली। यज्ञ में वेदपाठी के रूप में ब्र. लक्ष्यवीर, आचार्य कर्मवीर जी, ब्र. भीम ने सक्रिय भाग लिया।

दिनाङ्क २३/११/२०१६ को प्रातराश के बाद यज्ञ प्रातः ९ बजे से ११.३० तक चला। ११.३० पर ब्र. नन्दकिशोर जी, स्वामी अमृतानन्द जी द्वारा आर्यजनों की उपस्थिति में ध्वजारोहण किया गया। उत्साह की अपूर्व लहर थी। दोपहर २.३० पर शोभा- यात्रा का कार्यक्रम था। वाद्ययन्त्रों के साथ आश्रम से संन्यासी, वानप्रस्थी गण यज्ञ करते हुए ग्राम की ओर चलते गये। जयकारों के मध्य बालक, युवा, वृद्ध, मातायें ध्वज-पताकायें लहराते हुए आगे बढ़े। ग्रामवासियों का उत्साह भी देखने योग्य था। सभी पुष्पवृष्टि से स्वागत कर रहे थे। रोक-रोक कर सत्कार कर रहे थे। हर्ष की लहर सर्वत्र छा रही थी। शोभा यात्रा का भव्य स्वरूप एव ग्रामवासियों का उत्साह वास्तव में उल्लेखनीय रहा।

रात्रि में श्री भूपेन्द्रजी व लेखरामजी के भजनोपदेश हुए। ऋषि से ओत-प्रोत वातावरण व उत्साह रहा। यह कड़ी प्रतिदिन प्रवचन, भजन, उपदेश के साथ चली। भजनोपदेशक श्री भानुप्रकाश जी शास्त्री, श्री भूपेन्द्र जी, लेखरामजी ने बच्चों, युवा, वृद्धों को भजनों द्वारा एवं उपदेशों से मन्त्रमुग्ध कर दिया। प्रवचन की शृंखला में आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, आचार्य सोमदेव जी, स्वामी ऋतस्पति जी, वेदप्रकाश जी शर्मा आदि थे। ग्रामवासी प्रवचन सुनने के लिए अत्यन्त लालयित थे।

स्थानीय सहयोगी आचार्य सत्यप्रिय जी, हेमन्त जी दूबे, श्री रामनिवास जी चौधरी आदि का सक्रिय सहयोग रहा। यज्ञ व्यवस्था में श्री राजेश जी (अजमेर), ब्रह्मचारी निरंजन जी, ब्र. सत्यवीरजी का विशेष योगदान रहा।

आगन्तुकों में आर्य समाज इटारसी, आर्यसमाज होशंगाबाद, आर्यसमाज सारणी, आर्यसमाज छिन्दवाड़ा, आर्यसमाज रायचूर, आर्यसमाज डोलरिया, आर्यसमाज जबलपुर, गोरखपुर, भोपाल, आर्यसमाज खण्डवा, दिल्ली, हरियाणा आदि से अनेक आर्यजन इस यज्ञ में भाग लेने पहुँचे और अपनी आहूतियाँ दी। तन-मन-धन से सहयोग रहा।

अन्तिम दिन विशाल भण्डारा का आयोजन हुआ, जिसमें ग्रामवासी एवं इटारसी क्षेत्र के अनेक गणमान्य महानुभावों ने भाग लिया और पूर्णाहुति में अपना योगदान दिया।

गांव के प्रतिष्ठित जनों ने पाँचो दिन एक-एक समय की भोजन-व्यवस्था का बीड़ा भी उठाया। उचित आर्थिक सहयोग राशि भी प्राप्त हुई। ऋषि उद्यान से ब्रह्मचारी, मुनिगण, आश्रमवासी लगभग १५ की संख्या में थे। विशेष संन्यासीगण लगभग ३५ थे। इस प्रकार अतिउत्साह से यह कार्य सानन्द सम्पन्न हुआ। ईश्वर की अनुकम्पा पूर्णतः रही। आश्रम की माता वासुमति जी की सेवायें भी सराहनीय रहीं। **-देवमुनि**

आर्य जगत् के समाचार

१. वैदिक शोध संगोष्ठी- वैदिक वाङ्मय के मूर्धन्य विद्वान् पूज्य स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती जी (पं. बुद्धदेव विद्यालङ्कार) की पुण्यतिथि के अवसर पर दि. २४ जनवरी २०१७ को स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान, गुरुकुल प्रभात आश्रम, टीकरी, भोला-झाल, मेरठ, उ.प्र. में 'आरण्यक वाङ्मय में विविध-विद्याएँ' विषय पर अखिल-भारतीय वैदिक-शोध-संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। आपसे अनुरोध है कि आप शोध संगोष्ठी के लिए निर्धारित विषय के किसी एक पक्ष को केन्द्रित कर मौलिक एवं वैदुष्यपूर्ण शोधपत्र प्रस्तुत कर वैदिक वाङ्मय के प्रसार में सहभागी बनें।

सम्पर्क सूत्र- ०९४११४२५६१४

२. वार्षिकोत्सव तथा यज्ञशाला उद्घाटन- प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी महर्षि भारद्वाजाश्रम जुवाँ (वलांगीर, ओडिशा) में २१ और २२ जनवरी २०१७ को छठा वार्षिकोत्सव मनाया जा रहा है। इस वर्ष नवनिर्मित भव्य यज्ञशाला का उद्घाटन तथा पञ्चकुण्डीय यज्ञ भी होगा। इस कार्यक्रम में डॉ. वीरेन्द्र (भद्रक, ओडिशा) और स्वामी सोमानन्द (गाजियाबाद, उ.प्र.) आदि विद्वानों की उपस्थिति रहेगी।

३. अभिनन्दन समारोह का आयोजन- मानव सेवा प्रतिष्ठान एवं नॉर्थ अमेरिकन जाट चैरिटी के संयुक्त तत्त्वावधान में दि. १३ नवम्बर २०१६ को चौधरी छोटूराम धर्मशाला रोहतक में अभिनन्दन एवं छात्रवृत्ति प्रदान समारोह सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम का शुभारम्भ कन्या गुरुकुल शिखापुरम् की प्राध्यापिका उर्मिला आर्या के ब्रह्मत्त्व तथा प्रवेश आर्या के संयोजकत्व में हुआ।

४. पुरस्कार समारोह सम्पन्न- २० नवम्बर २०१६ को 'गंगाप्रसाद उपाध्याय पुरस्कार' समारोह देवभाषा संस्कृत की प्रकाण्ड विदुषी डॉ. राजलक्ष्मी वर्मा पूर्व विभागाध्यक्ष संस्कृत इलाहाबाद विश्वविद्यालय की अध्यक्षता में मनाया गया। प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री डॉ. राजेन्द्र प्रसाद इलाहाबाद राज्य विश्वविद्यालय के कुलपति मुख्य अतिथि ने प्रख्यात वैदिक विद्वानों को जयदत्त उप्रेती अलमोड़ा की कृति 'देवार्थ प्रकाश' तथा स्वामी क्रान्तिवेश महाराष्ट्र की कृति 'सम्यक् दर्शन' ग्रन्थ पर २१.०००/- राशि, स्मृति चिह्न तथा अंग वस्त्र से सम्मानित किया।

५. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज लल्लापुरा, वाराणसी, उ.प्र. का ८०वाँ वार्षिकोत्सव दि. १६ से १८ दिसम्बर २०१६ तक पटेल धर्मशाला तेलियाबाग, वाराणसी में समारोह मनाया गया।

६. वार्षिक उत्सव मनाया- आर्यसमाज जवाहर नगर, लुधियाना का चार दिवसीय वार्षिक उत्सव २७ नवम्बर २०१६ को सम्पन्न हुआ, जिसमें पं. बालकृष्ण शास्त्री ने यज्ञ करवाया। ध्वजारोहण श्रीमती सुषमा एवं श्री रामकृष्ण द्वारा किया गया। दिल्ली से पधारे डॉ. नरेन्द्र वेदालंकार ने प्रवचनों से लाभान्वित किया।

७. शताब्दी समारोह मनाया- आर्यसमाज बड़ा बाजार, सोनीपत की ओर से कम्यूनिटी सैण्टर सामुदायिक केन्द्र सैक्टर १४ सोनीपत में आयोजित १००वें वार्षिकोत्सव एवं भव्य शताब्दी समारोह अबोहर से पधारे वैदिक मिशनरी प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु एवं महाशय धर्मपाल (एम.डी.एच. वाले) की गरिमामयी उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। गुरुकुल शिवगंज, सिरोही, राजस्थान से विदुषी आचार्य सूर्यादेवी ने अपने प्रवचनों एवं वेद-मन्त्रों की सरल व्याख्या द्वारा मार्गदर्शन किया।

वैवाहिक

८. वर चाहिये- आर्य परिवार, संस्कारित, आयु- २६ वर्ष, कद- १५१ सेमी., शिक्षा- बी.टेक (आई.टी.), एम.बी.ए., गौर वर्ण युवती हेतु आर्यसमाजी परिवार का समकक्ष संस्कारित युवक चाहिए। **सम्पर्क- ०७४१७८३७४८४ ई-मेल-** aryavirender962@gmail.com

चुनाव समाचार

९. आर्यसमाज शृंगार नगर, लखनऊ, उ.प्र. के चुनाव में **प्रधान**- श्री सुशील कुमार श्रीवास्तव, **मन्त्री**- श्री राकेश माहना, **कोषाध्यक्ष**- श्रीमती आशा मेहता को चुना गया।

शोक-सन्देश

१०. स्वामी सत्यानन्द जी (पूर्व नाम- गुरुदयाल साधक)- फलौदी, जोधपुर, राज. का १६ दिसम्बर २०१६ की रात्रि को दीर्घकालीन रोग के कारण निधन हो गया। परोपकारिणी सभा की ओर से शोक संवेदनाओं के साथ हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।